

शाश्वत जीवन की नींव के नीचे

स्वयंसिद्ध सत्य को अपनाना

थॉमस जी. एडल द्वारा



जैसे पानी की धाराओं
के किनारे लगाया
गया एक पेड़।

भजन संहिता 1

शाश्वत जीवन की नींव के नीचे स्वयंसिद्ध सत्य को अपनाना

थॉमस जी. एडल द्वारा

कॉपीराइट © 2015 थॉमस जी. एडल

AI अनुवाद संस्करण, मई 2026

इस ebook को डाउनलोड करने के लिए धन्यवाद। आप इसे अपने मित्रों के साथ साझा कर सकते हैं। **इस पुस्तक का गैर-व्यावसायिक उद्देश्यों के लिए स्वतंत्र रूप से पुनरुत्पादन, प्रतिलिपि-निर्माण और वितरण किया जा सकता है।** जहाँ भी व्यावहारिक हो, कृपया इस कॉपीराइट वक्तव्य को शामिल करें। लेखक की लिखित सहमति के बिना प्रतियाँ लाभ के लिए बेची नहीं जा सकतीं।

अन्य ebook प्रारूप यहाँ उपलब्ध हो सकते हैं:

ShalomKoinonia.org

टिप्पणियाँ और संशोधन-सुझाव यहाँ भेजें:

Thomas@ShalomKoinonia.org

इस पुस्तक के अंग्रेज़ी से अन्य भाषाओं में अनुवाद अधिकांशतः कृत्रिम बुद्धिमत्ता (AI) द्वारा किए गए हैं और उनमें ऐसी त्रुटियाँ तथा असंगतियाँ हो सकती हैं, जिनका आशय लेखक का नहीं था। कृपया .epub फ़ाइल में आवश्यक सुधार करें और संभावित वितरण हेतु लेखक को उसका संशोधित पाठ भेजें (मुफ़्त "Sigil" सॉफ़्टवेयर .epub फ़ाइल में संशोधन करने के लिए एक अच्छा साधन हो सकता है)।

विषय-सूची

प्रस्तावना

भाग 1 कुछ स्वयंसिद्ध सत्य

1. सत्य है
2. सत्य या असत्य?
3. शुद्ध या अशुद्ध?
4. अच्छा या बुरा?
5. सही या गलत?
6. धर्मी या अधर्मी?
7. विभिन्न समूह
8. भिन्न मार्ग
9. भिन्न नियतियाँ
10. आरंभ या आरंभ नहीं?
11. विश्वास या विश्वास नहीं?
12. आध्यात्मिक लोक या नहीं?
13. सृष्टि या कोई सृष्टि नहीं?
14. सृष्टिकर्ता या नहीं?
15. सृष्टि और सृष्टिकर्ता एक ही हैं?
16. परमेश्वर या देवता?
17. एक स्वयंसिद्ध निष्कर्ष

भाग 2: विश्वास और विज्ञान

18. विश्वास के बारे में
19. विज्ञान के विषय में
20. विज्ञान में विश्वास?
21. छल
22. विश्वास और छल
23. विज्ञान और छल

24. विश्वास और विज्ञान में संघर्ष

भाग 3: परमेश्वर का प्रकाशन

25. प्रकृति में प्रकट परमेश्वर

26. स्वयं में प्रकट परमेश्वर

27. दूसरों में प्रकट परमेश्वर

28. संबंधों में प्रकट परमेश्वर

29. दूसरों के माध्यम से प्रकट परमेश्वर

30. धर्मग्रंथ द्वारा प्रकट परमेश्वर

31. यीशु के माध्यम से परमेश्वर प्रकट हुआ?

निष्कर्ष

प्रस्तावना

मेरी पिछली पुस्तक, “शाश्वत जीवन की नींव,” धर्मग्रंथ में पाए जाने वाले आध्यात्मिक सत्यों का सार प्रस्तुत करती है। उस पुस्तक में सत्य के स्रोत के रूप में धर्मग्रंथ की वैधता स्थापित करने का कोई प्रयास नहीं किया गया था; इसे मानकर चला गया था।

परंतु यह वर्तमान पुस्तक उन आध्यात्मिक सत्यों पर चर्चा करती है जो काफी हद तक धर्मग्रंथ से स्वतंत्र हैं। ये सत्य केवल अवलोकन और तर्क पर आधारित हैं। मुझसे पहले अनेक लोगों की तरह, मैं ऐसे सत्यों को “स्वयंसिद्ध सत्य” कहता हूँ। ये सत्य वह आधारशिला हैं, जिस पर सच्चा विश्वास निर्मित किया जा सकता है, और जिसके आधार पर धर्मग्रंथ को समझा और अपनाया जा सकता है।

यह पुस्तक तीन भागों में विभाजित है:

भाग 1: कुछ स्वयंसिद्ध सत्य

भाग 2: विश्वास और विज्ञान

भाग 3: परमेश्वर का प्रकटीकरण

भाग 1 स्वयंसिद्ध सत्य पर केंद्रित है, जो विश्वास से जुड़े विषयों के साथ-साथ सामान्य रूप से जीवन को समझने में भी महत्वपूर्ण हैं।

भाग 2 विश्वास और विज्ञान के बीच के तनाव पर विचार करता है, और यह बताता है कि दोनों को किस प्रकार समझा जाए ताकि वे एक-दूसरे के विरोध में न आएँ। इस क्षेत्र की स्पष्ट समझ हमें स्वयंसिद्ध आध्यात्मिक सत्यों को अपनाने में सहायता देनी चाहिए।

भाग 3 यह दिखाता है कि परमेश्वर का चरित्र के कुछ पहलू परमेश्वर की सृष्टि से स्वयंसिद्ध रूप से प्रकट होते हैं, और हम परमेश्वर के विषय में अन्य लोगों से कैसे सीख सकते हैं।

यद्यपि इस पुस्तक का भाग 2 और भाग 3 तार्किक सुसंगति के लिए कुछ हद तक भाग 1 पर निर्भर करते हैं, फिर भी प्रत्येक भाग कुछ सीमा तक अपने आप में स्वतंत्र है, और अन्य भागों से अलग होकर भी पढ़ा जा सकता है। यदि भाग 1 इस समय आपकी स्थिति से मेल न खाता हो, तो कृपया भाग 2 या भाग 3 पर आगे बढ़ने पर विचार करें। फिर भी, भाग 2 (*विश्वास और विज्ञान*) पढ़ने से पहले भाग 1 के अध्याय 11 (*विश्वास या अविश्वास?*) को पढ़ लेना सहायक हो सकता है।

निस्संदेह, इस पुस्तक की विषयवस्तु नई नहीं है। संभव है कि इस पुस्तक में कोई भी नई अवधारणा प्रस्तुत न की गई हो। यहाँ विवेचित अधिकांश अवधारणाएँ सैकड़ों नहीं तो हजारों वर्षों पुरानी हैं। फिर भी, इन विचारों को प्रस्तुत करने का ढंग कम-से-कम कुछ सीमा तक नया है। मेरी आशा है कि इन विषयों पर कुछ भिन्न दृष्टिकोण से विचार करने के परिणामस्वरूप आप सत्य की अधिक गहरी समझ तक पहुँचेंगे, और आपका जीवन उससे लाभान्वित होगा।

मैं उन अनेक लोगों का ऋणी हूँ जिन्होंने सत्य की मेरी अपनी खोज में मेरी सहायता की है। आपमें से कुछ को मैं व्यक्तिगत रूप से जानता हूँ; कुछ को मैं केवल आपके लेखन या श्रव्य-दृश्य कृतियों के माध्यम से जानता हूँ; और कुछ मेरे समय से पहले जी चुके थे। मेरे जीवन में सत्य का वचन पहुँचाने के लिए आपका धन्यवाद। उन लोगों का भी धन्यवाद जिन्होंने इस पुस्तक की प्रारंभिक पांडुलिपि की समीक्षा की और मुझे मूल्यवान सुझाव दिए। आपके कारण यह पुस्तक और बेहतर बनी है।

इस पुस्तक के आरंभ में दिए गए कॉपीराइट नोटिस के अनुसार, **इस पुस्तक की प्रतिलिपि स्वतंत्र रूप से बनाई जा सकती है और इसे स्वतंत्र रूप से वितरित किया जा सकता है।** मुद्रण के लिए विन्यस्त संस्करणों सहित, ई-पुस्तक के विभिन्न संस्करण यहाँ उपलब्ध हो सकते हैं:

ShalomKoinonia.org

भाग 1

कुछ स्वयंसिद्ध सत्य

सत्य क्या है?

सत्य के स्वरूप का अन्वेषण करने में मेरे साथ आइए। अनेक विषयों की तरह, इसे अच्छी तरह केवल तभी समझा जा सकता है जब इसकी तुलना उससे की जाए जो इससे भिन्न हो। सत्य मुख्यतः इसलिए अर्थपूर्ण है क्योंकि वह छल और त्रुटि के विरोध में खड़ा होता है। यदि छल और त्रुटि का अस्तित्व न होता, तो संभवतः सत्य की अवधारणा अर्थहीन हो जाती।

भाग 1 में हम उन अवधारणाओं का अन्वेषण करेंगे जिन्हें मैं “स्वयंसिद्ध” मानता हूँ। इसका अर्थ यह है कि ऐसी अवधारणाओं की वैधता केवल तर्क तथा मनुष्यों और अपने परिवेश के सावधानीपूर्वक अवलोकन से ही स्पष्ट हो जाती है। ऐसी अवधारणाओं को अन्य, अधिक मूलभूत अवधारणाओं से व्युत्पन्न या सिद्ध करने की आवश्यकता नहीं होती; वे बस स्वयंसिद्ध होती हैं। इन अवधारणाओं को जानने और समझने के लिए गहन दर्शन या धार्मिक शिक्षा की आवश्यकता नहीं होती; वे स्वयंसिद्ध हैं। मैं आपको आमंत्रित करता हूँ कि आप स्वयं विचार करें कि आप इन “सत्यों” को “स्वयंसिद्ध” मानते हैं या नहीं।

अध्याय 1 सत्य है

सत्य का संबंध परस्पर विरोधी अवधारणाओं के बीच उचित भेद करने से है। क्या कुछ अच्छा है या बुरा? क्या वह सही है या गलत? क्या वह ऊँचा है या नीचा? क्या वह गरम है या ठंडा? क्या उसमें कोई विशेष गुण है या नहीं? क्या कोई कथन सत्य है या असत्य? क्या वह घटना, जिसके बारे में किसी ने कहा कि वह हुई थी, वास्तव में हुई थी?

इस प्रकार के ये सभी प्रश्न सत्य से जुड़े हुए प्रश्न हैं। मेरा विचार है कि हममें से किसी के लिए भी सत्य का किसी न किसी स्तर पर सामना किए बिना एक भी दिन जीना असंभव है। आप उस पिछले कथन से सहमत हैं या नहीं, यह स्वयं भी सत्य का एक प्रश्न है। क्या आपने अभी मेरी बात को सत्य मानकर स्वीकार कर लिया, या आपने उस पर अधिक गहराई से विचार किया? हम कैसे जानें कि कोई बात सत्य है या नहीं?

किसी विशेष बात के सत्य होने के बारे में हम सहमत हैं या नहीं, यहाँ मुख्य बात वह नहीं है। मुख्य बात यह है कि हम सब नियमित रूप से इस प्रश्न से जूझते हैं कि विभिन्न बातें सत्य हैं या असत्य।

इससे हम शीघ्र ही अपने पहले स्वयंसिद्ध सत्य तक पहुँचते हैं:

सत्य का अस्तित्व स्वयंसिद्ध है।

ध्यान दें कि यह पहला “स्वयंसिद्ध सत्य” केवल यह नहीं बताता कि सत्य का अस्तित्व है, बल्कि यह कि सत्य का अस्तित्व “स्वयंसिद्ध” है। सत्य का अस्तित्व किसी अन्य तर्क पर निर्भर नहीं करता, चाहे वह सरल हो या जटिल। तर्क स्वयं सत्य के अस्तित्व को पूर्वधारित करता है। मुझे यह स्पष्ट रूप से प्रतीत होता है कि सत्य का अस्तित्व स्वयंसिद्ध है।

आगे मनन के लिए:

- क्या आपको लगता है कि सत्य का अस्तित्व स्वयंसिद्ध है? क्यों या क्यों नहीं?

अध्याय 2

सत्य या असत्य?

“क्या यह सत्य है...?” संभव है, आपने स्वयं भी ये शब्द कई बार कहे हों। आइए, एक सरल सत्य-असत्य परीक्षण के साथ अपनी चर्चा आगे बढ़ाएँ। कृपया निर्धारित करें कि निम्नलिखित चार कथनों में से प्रत्येक सत्य (T) है या असत्य (F):

1. ___ “काला रंग, सफेद रंग जैसा ही है।”
2. ___ “काला रंग सफेद रंग से भिन्न है।”
3. ___ “आदि में परमेश्वर ने आकाश और पृथ्वी की रचना की।”
4. ___ “परमेश्वर नहीं है।”

मुझे आशा है कि आप मुझसे सहमत होंगे कि पहले दो कथनों के उत्तर हैं: 1. असत्य, 2. सत्य.

अब, 3 और 4 प्रश्नों के विषय में, बातें कुछ अधिक कठिन हो जाती हैं। चूँकि यह पुस्तक किसी न किसी रूप में अनंत जीवन से संबंधित है, इसलिए आप उचित ही मान सकते हैं कि यह आध्यात्मिक दृष्टिकोण से लिखी गई है, और लेखक संभवतः परमेश्वर में विश्वास करता है। आप यह भी उचित ही मान सकते हैं कि मैं (लेखक) समझता हूँ कि अंतिम दो प्रश्नों के सही उत्तर हैं: 3. सत्य, 4. असत्य. किन्तु बहुत से लोग ऐसे हैं जो यह विश्वास नहीं करते कि परमेश्वर है, या जो परमेश्वर को मुझसे बहुत भिन्न ढंग से देखते हैं, और वे ईमानदारी से इन प्रश्नों में से एक या दोनों का उत्तर मुझसे भिन्न दे सकते हैं। तब हम इस बात पर असहमत होंगे कि इन प्रत्येक प्रश्नों का सही उत्तर सत्य है या असत्य। ऐतिहासिक रूप से, ऐसे मतभेदों ने कभी-कभी लोगों को एक-दूसरे पर अत्याचार करने और/या एक-दूसरे की हत्या करने तक पहुँचा दिया है। आइए, इससे बचने का प्रयास करें, और साथ ही यह भी स्वीकार करें कि बातों के सत्य या असत्य होने का यह प्रश्न अत्यंत महत्त्वपूर्ण है।

प्रारंभ में मेरी चिंता यह नहीं है कि आप ऊपर दिए गए चारों प्रश्नों के बारे में मेरे उत्तरों से सहमत हैं या नहीं, बल्कि यह है कि आप मेरे साथ इस बात से सहमत हैं या नहीं कि ऊपर दिए गए चारों प्रश्नों का एक सही सत्य-असत्य उत्तर है। यह सत्य के स्वरूप से संबंधित है। क्या कम-से-कम कुछ विषयों के संबंध में निरपेक्ष सत्य का अस्तित्व है? क्या यह सदैव सत्य है कि काला रंग किसी-न-किसी प्रकार से सफेद रंग से भिन्न है? हाँ। यह स्वयंसिद्ध है।

हमारे अपने अस्तित्व के बारे में क्या कहा जाए? क्या इस विषय में कोई निरपेक्ष सत्य है कि आप और मैं अस्तित्व में हैं या नहीं? मेरे लिए यह स्वयंसिद्ध है कि मैं अस्तित्व में हूँ, और मुझे आशा है कि आपके लिए भी यह स्वयंसिद्ध है कि आप अस्तित्व में हैं। हो सकता है कि आपका अस्तित्व मेरे लिए स्वयंसिद्ध न हो (क्योंकि संभव है कि मैं आपसे कभी मिला ही न होऊँ), परंतु मेरा आग्रह है कि इस बारे में फिर भी एक निरपेक्ष सत्य है कि आप अस्तित्व में हैं या नहीं। आपके अस्तित्व के संबंध में मेरा अपना विश्वास इस पूर्ण सत्य को नहीं बदलता कि आप हैं या नहीं।

इसी प्रकार, क्या इस विषय में भी कोई पूर्ण सत्य है कि परमेश्वर का अस्तित्व है या नहीं? मुझे तो ऐसा ही प्रतीत होता है। या तो परमेश्वर का अस्तित्व है, या उसका अस्तित्व नहीं है। मुझे किसी प्रकार की मध्यवर्ती स्थिति असंभाव्य प्रतीत होती है। यह कथन कि “परमेश्वर नहीं है” या तो सत्य है या असत्य, और परमेश्वर के अस्तित्व के बारे में मेरी व्यक्तिगत मान्यताएँ उस पूर्ण सत्य को नहीं बदलतीं।

हालाँकि, यहाँ एक स्पष्टीकरण आवश्यक है। “परमेश्वर” शब्द से हमारा क्या अभिप्राय है? इस शब्द को कैसे परिभाषित या समझा जाता है, इससे यह प्रभावित हो सकता है कि “परमेश्वर” वास्तव में अस्तित्व में है या नहीं। अतः, ऐसी बातों के विषय में पूर्ण सत्य होने पर भी, उस सत्य को सही रीति से समझने के लिए शब्दों की सावधानीपूर्वक परिभाषा आवश्यक हो सकती है।

अतः, हम देखते हैं कि कम-से-कम कुछ विषयों के संबंध में पूर्ण सत्य है, चाहे हम उससे अवगत हों या नहीं। कुछ विषयों के बारे में पूर्ण सत्य स्वयंसिद्ध न हो, पर यह स्वयंसिद्ध है कि:

परम सत्य है।

आगे मनन के लिए:

- क्या आप सहमत हैं कि परम सत्य है? क्यों या क्यों नहीं?

अध्याय 3 स्वच्छ या गंदा?

आइए, अपने सत्य-या-असत्य परीक्षण को आगे बढ़ाएँ। कृपया विचार करें कि निम्नलिखित कथन सत्य (T) हैं या असत्य (F), इस आधार पर कि उन कपड़ों के बारे में आपका व्यक्तिगत ज्ञान क्या है जिन्हें आप इस समय पहने हुए हो सकते हैं:

5. ___ “मैं वस्त्र पहने हुए हूँ; मैं नग्न नहीं हूँ।”

6. ___ “मैंने साफ़ मोज़े पहने हैं।”

पहला प्रश्न काफ़ी सीधा-सादा है। हममें से अधिकांश इसका उत्तर “सही” देंगे। कुछ लोग ईमानदारी से “गलत” उत्तर दे सकते हैं। किसी भी स्थिति में, यदि संबंधित सभी लोगों को आपकी वेशभूषा की स्थिति की सही जानकारी हो, तो संभवतः इस विषय पर बहुत अधिक बहस नहीं होगी। इसे मैं “काला-सफ़ेद” प्रकार का सत्य कहता हूँ। यह कथन स्पष्ट रूप से सही या गलत है, और जिन सभी लोगों को स्थिति की सही जानकारी होगी, उनके बहुत संभव है कि मत एक जैसे हों।

पिछला अध्याय मुख्यतः इसी प्रकार के “काला-सफ़ेद”, “सही-या-गलत” प्रकार के सत्य के बारे में था। निस्संदेह, इस प्रकार के सत्य को लेकर असहमति तब पैदा हो सकती है, जब कम-से-कम कुछ लोगों को विचाराधीन उस काला-सफ़ेद सत्य की सही जानकारी न हो।

अब ऊपर दिया गया दूसरा प्रश्न (आपके मोज़ों के बारे में) संभवतः उत्तर देना अधिक कठिन है। यदि आप मेरी तरह हैं, तो ऐसे प्रश्न से मुझे खीझ होती है। यह प्रश्न न केवल सामाजिक दृष्टि से अनुपयुक्त है, बल्कि मेरा मानना है कि यह विषय इतना जटिल है कि उसे केवल सही या गलत के सरल उत्तर में व्यक्त नहीं किया जा सकता। जब मैं यह लिख रहा हूँ, तब मैंने मोज़े पहन रखे हैं, पर क्या वे “साफ़” हैं? मेरे मोज़े शायद पूरी तरह साफ़ नहीं हैं, लेकिन मैं उन्हें गंदा भी नहीं मानता। न तो “सही” और न ही “गलत” कोई सटीक उत्तर प्रतीत होता है। धोए जाने के तुरंत बाद मैं अपने मोज़ों को साफ़ मानता हूँ, लेकिन जैसे ही मैं उन्हें पहनता हूँ, वे साफ़ होने की अवस्था से गंदा होने की ओर बढ़ने लगते हैं। मैं उन्हें गंदे की अपेक्षा अधिक साफ़ मानना पसंद करता हूँ, यद्यपि वे अब पूरी तरह साफ़ नहीं रहे। हो सकता है, आप यह मानना पसंद करें कि जैसे ही मैं अपने मोज़े पहनूँ, वे “गंदे” कहलाएँ।

यह अजीब-सी चर्चा एक महत्वपूर्ण बात स्पष्ट करने के लिए है: सत्य के कुछ पहलू स्वभावतः “काले-और-सफेद” नहीं होते, बल्कि उन्हें स्तर या मात्रा के रूप में समझना अधिक उचित होता है। अर्थात्, कुछ बातों को “काले-और-सफेद” के बजाय अधिक “धूसर क्षेत्र” के रूप में समझना बेहतर होता है। यदि हम उन्हें केवल काले-और-सफेद तथ्यों, या सही-गलत के तथ्यों, तक सीमित करने का प्रयास करें, तो उनके बारे में हमारी समझ बहुत सतही रह जाएगी। चर्चा की सुविधा के लिए, मैं इस प्रकार के सत्य या अवधारणा को “श्वेत-श्याम” कहने के बजाय “धूसर,” या “अधिक धूसर,” या “धूसर क्षेत्र” कहूँगा।

इससे हम एक और महत्वपूर्ण सिद्धांत का सार इस प्रकार प्रस्तुत कर सकते हैं, जिसे मैं स्वयंसिद्ध मानता हूँ:

***कुछ सत्य श्वेत-श्याम होते हैं,
जबकि अन्य सत्य अधिक धूसर होते हैं।***

आपमें से कुछ लोग ऊपर प्रस्तुत मेरे तर्क में त्रुटि निकाल सकते हैं। आप यह कह सकते हैं कि पहला सत्य-असत्य कथन वास्तव में श्वेत-श्याम नहीं है। उदाहरण के लिए, कोई व्यक्ति इतने कम वस्त्र पहने हो सकता है कि सही उत्तर विवाद का विषय बन जाए। यह एक और महत्वपूर्ण अवधारणा को स्पष्ट करता है:

***कुछ सत्य, जो श्वेत-श्याम प्रतीत होते हैं,
कभी-कभी धूसर क्षेत्र भी समेटे हो सकते हैं।***

आगे मनन के लिए:

- क्या आप सहमत हैं कि कुछ सत्यों में धूसर क्षेत्र शामिल होते हैं? क्यों, या क्यों नहीं?
- क्या आपके जीवन में कोई ऐसी समस्या है, जिसका समाधान अधिक सहजता से हो सकता है, यदि उसे श्वेत-श्याम मुद्दा मानने के बजाय धूसर क्षेत्र से जुड़ा हुआ समझा जाए?

अध्याय 4

अच्छा या बुरा?

कृपया मेरे साथ बने रहें, जबकि मैं आपसे सत्य या असत्य के कुछ और प्रश्नों के उत्तर देने का अनुरोध करता हूँ। ये प्रश्न पिछले प्रश्नों की अपेक्षा लंबे हैं, लेकिन यदि आप इन्हें ध्यान से पढ़ें, तो मुझे लगता है कि आप पाएँगे कि ये बहुत कठिन नहीं हैं। कृपया अपनी खरीदारी की आदतों के आधार पर विचार करें कि निम्नलिखित कथन सत्य (T) हैं या असत्य (F):

7. ____ “यदि मैं एक डबलरोटी खरीदने जा रहा होता, और मुझे एक ताज़ी डबलरोटी तथा एक पुरानी फफूँदी लगी डबलरोटी में से चुनने का विकल्प दिया जाता (अन्यथा दोनों डबलरोटियाँ समान हैं और उनकी कीमत भी एक ही है), तो मैं ताज़ी डबलरोटी नहीं, बल्कि पुरानी फफूँदी लगी डबलरोटी खरीदता।”
8. ____ “यदि मैं एक कुर्सी खरीद रहा होता, और मुझे ऐसी कुर्सी में से चुनना होता जो अच्छी दशा में दिखती हो और ऐसी कुर्सी में से जिसका एक पाया टूटा हो (अन्य बातों में दोनों कुर्सियाँ समान हों और उनकी कीमत भी एक-सी हो), तो मैं टूटा पाया वाली कुर्सी खरीदता।”

मुझे आशा है कि यह निर्णय लेने में आपको बहुत अधिक कठिनाई नहीं हुई होगी। मेरा अनुमान है कि आप भी संभवतः मेरी ही तरह हैं: मेरे लिए तो ये दोनों कथन निश्चय ही असत्य हैं! मैं क्यों चाहूँगा कि रोटी “ताज़ी” हो या “पुरानी और फफूँदी लगी हुई” हो? मैं ऐसी कुर्सी को क्यों पसंद करूँगा जिसका पाया टूटा न हो? क्या इसका सीधा-सा कारण यह नहीं है कि, रोटी के मामले में, “पुरानी और फफूँदी लगी हुई” बुरी है, जबकि “ताज़ी” अच्छी है? इन दोनों कुर्सियों के संबंध में, क्या “टूटा हुआ पाया” एक बुरी विशेषता नहीं है, जबकि “अच्छी दशा में” होना एक अच्छी विशेषता है? क्या हम लगभग हमेशा किसी वस्तु के बुरे होने की अपेक्षा उसके अच्छे होने को अधिक पसंद नहीं करते?

यहीं से हम दो और स्वयंसिद्ध सत्य पर आते हैं:

**कुछ बातें अच्छी होती हैं,
और कुछ बातें बुरी होती हैं।**

**अच्छी बातों को सामान्यतः अपनाना चाहिए,
जबकि बुरी बातों को सामान्यतः अस्वीकार करना चाहिए।**

निश्चित ही, किसी व्यक्ति के लिए टूटी हुई कुर्सी को ठीक करना उचित हो सकता है, ताकि वह कुर्सी फिर से अच्छी हो जाए। पुरानी, फफूंदी लगी रोटी अच्छी खाद बन सकती है (लेकिन अच्छी रोटी नहीं)। इस प्रकार हम देखते हैं कि अच्छे और बुरे की अवधारणा जटिल हो सकती है। तथापि, इससे ऊपर उल्लिखित स्वयंसिद्ध सत्य निष्प्रभावी नहीं हो जाते। “अच्छा” और “बुरा” शब्दों के वास्तविक अर्थ हैं, और इनका उपयोग वास्तविक बातों का वर्णन करने के लिए किया जाता है, जिनके वास्तविक परिणाम होते हैं और जो वास्तव में हमारे लिए महत्त्व रखते हैं।

आगे मनन के लिए:

- ऐसी कौन-सी बातें हैं जिन्हें आप अच्छा मानते हैं?
- ऐसी कौन-सी बातें हैं जिन्हें आप बुरा मानते हैं?
- क्या आपके जीवन में ऐसी बुरी बातें हैं, जिनसे आपको छुटकारा पा लेना चाहिए?

अध्याय 5 सही या गलत?

एक बार फिर, हम सत्य-असत्य के एक प्रश्न से आरंभ करेंगे। कृपया अपने व्यक्तिगत विश्वासों के आधार पर विचार करें कि निम्नलिखित कथन सत्य (T) है या असत्य (F):

9. ____ “मेरा मानना है कि किसी व्यक्ति के लिए किसी भी प्रकार से एक शिशु को यातना देना उचित है, यदि ऐसा करना उस व्यक्ति के धर्म का हिस्सा हो।”

मेरी समझ में, कुछ लोग उस प्रश्न का उत्तर “सही” देंगे। हालांकि, मुझे नहीं लगता कि मैं कभी ऐसे किसी व्यक्ति से मिला हूँ जो यह बात सीधे मुझसे स्वीकार करे। यदि संयोग से आप ऐसे व्यक्ति हैं, तो कृपया एक थोड़ा भिन्न कथन पर विचार करें:

10. ____ “मेरा विश्वास है कि किसी भी व्यक्ति के लिए मुझे किसी भी प्रकार से यातना देना उचित है, यदि ऐसा करना उसके धर्म का हिस्सा है। मैं उन्हें बिना विरोध किए मुझे यातना देने दूँगा, क्योंकि उनका विरोध करना उनकी धार्मिक स्वतंत्रता में बाधा डालेगा।”

यदि आप ईमानदार हैं और विक्षिप्त नहीं हैं, तो मुझे लगता है कि आप संभवतः मेरे साथ सहमत होंगे कि दूसरे कथन का उत्तर “गलत” है। यदि आपने उन कथनों में से कम-से-कम एक के लिए “गलत” उत्तर दिया है, तो इससे “धर्म की स्वतंत्रता” के बारे में एक भ्रांति उजागर होती है। बहुत कम लोग वास्तव में बिना किसी सीमा के धर्म की स्वतंत्रता में विश्वास करते हैं। ऐसा क्यों है? क्या धार्मिक उद्देश्यों के लिए लोगों को यातना देना स्वभावतः गलत है? निस्संदेह है। यह स्वयंसिद्ध है।

यदि ऐसी बातें धार्मिक उद्देश्यों के बजाय आनंद के लिए की जाएँ, तो क्या होगा? क्या उससे ऐसी बातें सही हो जाएँगी? निस्संदेह नहीं।

दूसरी ओर, क्या ऐसी प्रथाओं का विरोध करना सही है? निस्संदेह है। यह भी स्वयंसिद्ध है। यह हमें दो और स्वयंसिद्ध सत्य तक पहुँचाता है:

**कुछ बातें नैतिक दृष्टि से सही होती हैं,
और कुछ बातें नैतिक दृष्टि से गलत होती हैं।**

**सही बातों को सामान्यतः अपनाया जाना चाहिए;
गलत बातों को सामान्यतः अस्वीकार किया जाना चाहिए।**

ध्यान दें कि “सही या गलत” की यह अवधारणा पिछले अध्याय में चर्चा किए गए “अच्छा या बुरा” के सिद्धांत से भिन्न है। इस अध्याय में “सही” और “गलत” शब्द नैतिकता से संबंधित हैं, जबकि पिछले अध्याय में “अच्छा” और “बुरा” शब्द नैतिकता से संबंधित नहीं थे।

यह हमें शब्दार्थ की समस्या तक ले आता है। कई शब्दों के एक से अधिक अर्थ होते हैं, या उनके अर्थ की अलग-अलग छायाएँ होती हैं, और ऐसे शब्दों का प्रयोग भ्रम उत्पन्न कर सकता है। दुर्भाग्यवश, बहुत कम शब्द ऐसे हैं जिनमें किसी न किसी सीमा तक यह समस्या न पाई जाती हो, इसलिए हमें इसी समस्या के साथ काम चलाना पड़ता है। उदाहरण के लिए, अंग्रेज़ी भाषा में “good” और “bad” शब्दों का प्रयोग नैतिक आचरण के संदर्भ में किया जा सकता है (जैसे, हम दूसरों के साथ अच्छा व्यवहार करते हैं या बुरा व्यवहार करते हैं), और गैर-नैतिक बातों के संदर्भ में भी (जैसे, रोटी अच्छी है या बुरी, या किसी संगीतकार का प्रदर्शन अच्छा था या बुरा)। “सही” और “गलत” शब्दों का प्रयोग नैतिकता के प्रश्नों को स्पष्ट करने के लिए भी किया जा सकता है, या केवल किसी बात की शुद्धता बताने के लिए भी, जैसे यह कि किसी शब्द की वर्तनी सही है या rong. हालाँकि, हम सामान्यतः ताज़ी रोटी को “सही” या फफूंदी लगी रोटी को “गलत” नहीं कहेंगे। प्रायः किसी शब्द का अभिप्रेत अर्थ उस संदर्भ से स्पष्ट हो जाता है जिसमें उसका प्रयोग किया गया है।

आगे मनन के लिए:

- ऐसी कौन-सी बातें हैं जिन्हें आप सही मानते हैं?
- ऐसी कौन-सी बातें हैं जिन्हें आप गलत मानते हैं?

अध्याय 6

धर्मी या अधर्मी?

आइए, फिर से कुछ सत्य-असत्य प्रश्नों से शुरुआत करें। कृपया अपने व्यक्तिगत विश्वासों और आचरण के आधार पर विचार करें कि निम्नलिखित कथन सत्य (T) हैं या असत्य (F):

11. ____ “सभी लोग मूलतः अच्छे होते हैं, और लगातार वही करने का प्रयास करते हैं जो सही है।”
12. ____ “मैं हमेशा वही करता हूँ जो नैतिक दृष्टि से सही है; मैं कभी भी ऐसा कुछ नहीं करता जो नैतिक दृष्टि से गलत हो।”

पिछले अध्याय में हमने देखा कि कुछ बातें नैतिक दृष्टि से सही होती हैं, और कुछ बातें नैतिक दृष्टि से गलत होती हैं। विशेष विषयों के संबंध में हम इस बात पर असहमत हो सकते हैं कि क्या सही है और क्या गलत, लेकिन यह अत्यंत स्पष्ट प्रतीत होता है कि कम-से-कम कुछ बातें नैतिक दृष्टि से सही हैं और कुछ बातें नैतिक दृष्टि से गलत हैं। लगभग उतना ही स्पष्ट यह भी है कि कुछ लोग जान-बूझकर ऐसे काम करते हैं जो नैतिक दृष्टि से गलत हैं, जबकि अन्य जान-बूझकर ऐसे काम करते हुए दिखाई देते हैं जो नैतिक दृष्टि से सही हैं।

इसलिए, मेरे लिए पहला True-False कथन स्पष्ट रूप से “False” है। दुनिया ऐसे लोगों से भरी प्रतीत होती है जो निरंतर सही काम करने का प्रयास नहीं करते। उदाहरण खोजना कठिन नहीं है; लगभग किसी भी समाचारपत्र में देखिए, और संभवतः आपको उसके अच्छे उदाहरण मिल जाएँगे।

दूसरा कथन अधिक कठिन है। संभव है कि मैं इस समय हमेशा वही करने का प्रयास करता हूँ जो नैतिक दृष्टि से सही है, लेकिन यदि मैं अपने आप से ईमानदार रहूँ, तो मैं हमेशा नैतिक दृष्टि से सही काम नहीं करता। मैं यह सोचना पसंद करता हूँ कि मेरी हाल की असफलताएँ अनजाने में हुई हैं, लेकिन मुझे पूरा विश्वास नहीं कि यदि उन्हें और ध्यान से देखा जाए, तो हर बार यही निष्कर्ष निकलेगा। जो भी हो, मैं हमेशा वह नहीं करता जो नैतिक रूप से सही है। फिर से, मेरा उत्तर “गलत” है।

यदि आप अपने प्रति ईमानदार हैं, तो मुझे संदेह है कि आपने भी उस दूसरे कथन के लिए “गलत” ही उत्तर दिया होगा। यदि ऐसा है, तो इससे यह प्रश्न उठता है कि क्या कोई भी व्यक्ति पूरी तरह धर्मी है। क्या कोई ऐसा व्यक्ति है जो हमेशा वही करता है जो नैतिक रूप से सही है और कभी भी ऐसा कुछ नहीं करता जो नैतिक

रूप से गलत हो? हालाँकि, यह प्रश्न “स्वयंसिद्ध” सत्यों पर हमारी वर्तमान चर्चा के दायरे से बाहर है। अभी के लिए, आइए केवल इस अधिक स्पष्ट प्रश्न पर विचार करें कि क्या कुछ लोग दूसरों की अपेक्षा नैतिक रूप से सही कार्य करने का अधिक प्रयत्न करते हैं। हमारे वर्तमान उद्देश्य के लिए, आइए “धर्मी” की ऐसी परिभाषा लें जो निरपेक्ष की अपेक्षा अधिक सापेक्ष हो:

धर्मी: सामान्यतः वह करने का प्रयास करना जो नैतिक रूप से सही है, और उन बातों से बचना जो नैतिक रूप से गलत हैं।

विचार कीजिए कि बहुत-सी फिल्मों में भलाई और बुराई के संघर्ष के विषय पर आधारित होती हैं। इन फिल्मों में कुछ पात्रों को सामान्यतः धर्मी के रूप में दिखाया जाता है (अर्थात् वे प्रायः नैतिक रूप से सही काम करते हैं), जबकि अन्य को अधर्मी के रूप में दिखाया जाता है (अर्थात् वे प्रायः नैतिक रूप से गलत काम करते हैं)। यह भेद प्रायः स्पष्ट होता है, और ऐसा प्रतीत होता है कि यह सभी संस्कृतियों में पाया जाता है।

यह सब हमें एक और स्वयंसिद्ध सत्य तक ले आता है:

कुछ लोग धर्मी होते हैं, और कुछ लोग अधर्मी होते हैं।

अब, इसे स्पष्ट रूप से समझ लें। यह सत्य श्वेत-श्याम प्रकार का सत्य नहीं है; इसमें धूसर क्षेत्र भी शामिल हैं। इसका यह दावा नहीं है कि हर व्यक्ति को साफ-साफ धर्मी या अधर्मी की किसी एक श्रेणी में रखा जा सकता है। और न ही इसका यह दावा है कि कोई व्यक्ति पूरी तरह धर्मी या पूरी तरह अधर्मी होता है। यह केवल इस बात की पुष्टि करता है that कुछ लोग सचमुच नैतिक रूप से सही काम करने का प्रयास करते हैं, और कुछ लोग नहीं करते। बहुत-से लोग शायद कहीं बीच में होते हैं, और जिस बात को वे नैतिक रूप से सही मानते हैं, उसे करने के लिए वे अलग-अलग स्तर पर प्रयास करते हैं।

आगे मनन के लिए:

- अपने जीवन पर विचार करें। क्या आप निरंतर वही करते हैं, जिसे आप नैतिक रूप से सही जानते हैं? क्यों, या क्यों नहीं?

अध्याय 7

विभिन्न समूह

हम सभी किसी-न-किसी समूह से जुड़े होते हैं। कुछ समूह ऐसे होते हैं, जिनसे हम अपनी इच्छा से जुड़ते हैं; अन्य समूहों से हमारा जुड़ाव अनैच्छिक होता है। जो बातें अक्सर **अनैच्छिक** समूह-संबंध मानी जाती हैं, उनके कुछ उदाहरण निम्न प्रश्नों से स्पष्ट होते हैं:

- क्या आप पुरुष हैं या महिला?
- आप किस देश के नागरिक हैं? (या, क्या आप राज्यविहीन लोगों के समूह में आते हैं?)
- आपकी मातृभाषा क्या है?
- क्या आपकी आयु 50 वर्ष से अधिक है, या 50 वर्ष से कम?

उन समूहों के कुछ उदाहरण, जिन्हें **स्वैच्छिक** संबंध माना जा सकता है, निम्न प्रश्नों से भी स्पष्ट होते हैं:

- क्या आप धार्मिक हैं या नहीं? यदि हाँ, तो आप किस धार्मिक समूह का हिस्सा हैं? या, क्या आप उन लोगों के समूह में हैं, जो स्वयं को धार्मिक नहीं मानते?
- क्या आप उस समूह का हिस्सा हैं जिसे पोलियो के विरुद्ध टीका लगाया गया है?
- क्या आप किसी राजनीतिक दल से जुड़े हुए हैं? या क्या आप उन लोगों के समूह में हैं जिनकी किसी दल से संबद्धता नहीं है?
- क्या आप किसी विशेष खेल के प्रशंसक हैं? क्या आप किसी विशेष खेल में सक्रिय हैं?

जो “स्वैच्छिक” संबद्धता है और जो “अनैच्छिक” संबद्धता है, उनके बीच का अंतर अक्सर बहुत स्पष्ट नहीं होता, और कुछ हद तक संस्कृति के अनुसार बदल भी सकता है। उदाहरण के लिए, बहुत से लोग अपने धर्म को स्वैच्छिक संबद्धता नहीं मानते, क्योंकि उनकी संस्कृति इस क्षेत्र में स्वतंत्र चुनाव को बढ़ावा नहीं देती। एक और उदाहरण: बहुत से लोगों के लिए पोलियो के विरुद्ध टीकाकरण कानूनी रूप से अनिवार्य हो सकता है; ऐसी स्थिति में “टीका लगाए गए” समूह का हिस्सा होना एक अनैच्छिक समूह-संबद्धता माना जा सकता है। या संभव है कि आपके माता-पिता ने आपको टीका लगवाया हो, और इस मामले में आपकी अपनी पसंद

बहुत कम रही हो, और अब उस टीके को लगवाया हुआ न मानने का कोई उपाय भी न हो।

खैर, इससे हम दो और स्वयंसिद्ध सत्य तक पहुँचते हैं:

हर व्यक्ति विभिन्न समूहों से जुड़ा होता है।

कुछ समूहों से जुड़ाव स्वेच्छा से होता है;

कुछ समूहों से जुड़ाव अनैच्छिक होता है।

आगे मनन के लिए:

- वे कौन-कौन से समूह हैं जिनसे आप जुड़े हुए हैं?
- उन समूहों में से किन-किन से आप स्वेच्छा से जुड़े हैं?
- उन समूहों में से किन-किन से आप अनैच्छिक रूप से जुड़े हैं?

अध्याय 8 भिन्न मार्ग

किसी न किसी सीमा तक, हममें से प्रत्येक जीवन में एक अलग मार्ग पर चलता है। यहाँ तक कि समान जुड़वाँ भी अलग-अलग मार्गों पर होते हैं, यद्यपि उनकी आनुवंशिक बनावट एक जैसी हो सकती है। समान जुड़वाँ के अलग-अलग “मार्ग” जन्म के समय भी स्पष्ट दिखाई देते हैं: उनमें से एक पहले जन्म लेता है, दूसरा बाद में। यद्यपि यह भेद केवल समय का अंतर मात्र प्रतीत हो सकता है, फिर भी यह एक महत्त्वपूर्ण अंतर है। इसके बाद उनके जीवन और भी अधिक अलग दिशाओं में बढ़ते चले जाएँगे। वे कभी भी ठीक एक ही समय पर ठीक एक ही स्थान में नहीं होंगे, और बहुत संभव है कि अंततः उनके व्यक्तित्व और जीवन-पथ में उल्लेखनीय भिन्नताएँ उभर आएँ।

यद्यपि अनगिनत प्रकार से हमारे प्रत्येक जीवन-पथ किसी भी अन्य व्यक्ति से विशिष्ट रूप से भिन्न होते हैं, फिर भी “भिन्न मार्गों” को देखने के कुछ व्यापक तरीके भी हैं, जो व्यक्तियों की अपेक्षा लोगों के समूहों पर अधिक लागू होते हैं। विभिन्न समूह प्रायः कुछ समान मार्गों को साझा करते हैं।

उदाहरण के लिए, कुछ लोग अपने समान विचार रखने वाले अन्य लोगों के साथ किसी विशेष धर्म का अनुसरण करना चुनते हैं। कुछ लोग एक विशेष career path चुनते हैं, साथ ही अन्य लोगों के भी, जो उसी कार्यक्षेत्र में मिलते-जुलते careers का अनुसरण कर रहे होते हैं। कुछ लोग शिक्षा का ऐसा मार्ग चुनते हैं, जिसमें किसी विशेष college या university में जाना शामिल होता है; जबकि कुछ लोग अन्य मार्ग चुनते हैं। कुछ लोग विवाह और माता-पिता बनने के मार्ग पर चलते हैं, जबकि कुछ नहीं चलते। इस प्रकार के मार्ग लोगों के समूहों द्वारा साझा किए जाते हैं।

यह हमें एक और स्वयंसिद्ध सत्य तक ले आता है, जो व्यक्तियों और लोगों के समूहों—दोनों पर लागू होता है:

विभिन्न लोग विभिन्न मार्गों पर चलते हैं।

आइए, अब इस पर नैतिक दृष्टिकोण से और विचार करें। हमने पहले देखा था कि कुछ लोग “धर्मी” हैं और कुछ लोग “अधर्मी” हैं (भिन्न-भिन्न मात्राओं में)। कुछ लोग जानबूझकर ऐसे काम करते हैं जो नैतिक रूप से गलत हैं, जबकि अन्य लोग जानबूझकर ऐसे काम करते हुए प्रतीत होते हैं जो नैतिक रूप से सही हैं। उदाहरण के लिए, कुछ लोग सचमुच “golden rule” के अनुसार जीने का प्रयास करते हैं:

- “जैसा तुम चाहते हो कि दूसरे तुम्हारे साथ करें, वैसा ही तुम भी उनके साथ करो।”
कुछ लोग उस नियम के एक विकृत रूप के अनुसार जीना पसंद करते हैं:
- “दूसरों के साथ वैसा करने से पहले, जैसा वे तुम्हारे साथ कर सकते हैं, तुम ही उनके साथ कर डालो।”

दूसरों के साथ व्यवहार करने के ये भिन्न तरीके जीवन के दो अलग-अलग मार्गों के रूप में समझे जा सकते हैं, और इससे हम एक और महत्वपूर्ण निष्कर्ष पर पहुँचते हैं:

**कुछ लोग सही काम करने के मार्ग पर हैं;
कुछ लोग गलत काम करने के मार्ग पर हैं।**

ध्यान दें, यह निष्कर्ष यह दावा नहीं करता कि सभी लोग स्पष्ट रूप से इन दो मार्गों में से किसी एक पर ही हैं। यह एक और “धूसर क्षेत्र” संबंधी सत्य है। बहुत-से लोग कहीं बीच के मार्ग पर हो सकते हैं—कभी सही करते हुए, और कभी गलत। फिर भी, यह सत्य उस स्पष्ट बात की पुष्टि करता है: कुछ लोग, उन लोगों की अपेक्षा जो सही करने का बहुत कम या कोई प्रयास ही नहीं करते, कहीं अधिक धर्मपूर्ण जीवन जी रहे हैं। ये लोग भिन्न मार्गों पर हैं।

आगे मनन के लिए:

- आप उन विभिन्न मार्गों का वर्णन कैसे करेंगे, जिन पर आपका जीवन चला है?
- क्या आप निरंतर सही काम करने के मार्ग पर चले हैं?
- ऐसे कौन-से मार्ग हैं जिन पर आप चलना चाहेंगे?

अध्याय 9 भिन्न नियतियाँ

हमने पिछले अध्याय में देखा कि भिन्न लोग जीवन में भिन्न मार्गों पर हैं। जिस प्रकार भिन्न वास्तविक मार्ग (जैसे पगडंडियाँ और सड़कें) भिन्न गंतव्यों तक ले जाते हैं, उसी प्रकार जीवन के भिन्न मार्ग भिन्न नियतियों तक ले जाते हैं।

यह स्पष्ट है कि लोग जिस मार्ग पर हैं, उसका उनकी नियति पर गहरा प्रभाव पड़ता है। जो खिलाड़ी निरंतर प्रशिक्षण का मार्ग चुनते हैं, वे सामान्यतः बेहतर खिलाड़ी बन जाते हैं। निष्क्रिय जीवनशैली वाले लोग सामान्यतः अधिक दुर्बल हो जाते हैं। जो विद्यार्थी मन लगाकर अध्ययन करते हैं, वे अधिक ज्ञान और कौशल प्राप्त करते हैं। जो लोग बहुत अधिक शराब पीने के मार्ग पर चलते हैं, वे प्रायः शराबी बन जाते हैं। जो लोग दूसरों के प्रति दयालुता का अभ्यास करते हैं, वे प्रायः अधिक दयालु व्यक्ति बन जाते हैं। जो लोग अवैध नशीले पदार्थ लेने का चुनाव करते हैं, वे अक्सर नशे के आदी हो जाते हैं। जो लोग बुरे काम करते हैं, वे सामान्यतः बुराई करने में अधिक निपुण हो जाते हैं। सही काम करने का मार्ग बढ़ती हुई धर्मपरायणता की ओर ले जाता है। गलत काम करने का मार्ग बढ़ती हुई अधर्मिता की ओर ले जाता है।

अच्छे खिलाड़ी, कुशल लोग, धर्मी लोग, अधर्मी लोग, और हर प्रकार के लोग यूँ ही नहीं बन जाते। उनकी नियति जीवन में भिन्न-भिन्न मार्गों पर चलने का परिणाम होती है। यह हमें एक और स्वयंसिद्ध सत्य तक ले जाता है:

भिन्न मार्ग भिन्न नियतियों तक ले जाते हैं।

हम जिन मार्गों का अनुसरण करते हैं, वे बहुत हद तक हमारी भावी नियति को निर्धारित करते हैं।

आगे मनन के लिए:

- विचार कीजिए कि दस वर्षों बाद आप किस प्रकार का व्यक्ति बनना चाहेंगे। क्या आज आप जिन मार्गों पर चल रहे हैं, वे आपको उस नियति की ओर ले जा रहे हैं?

अध्याय 10

आरंभ था, या कोई आरंभ नहीं था?

क्या आपके अस्तित्व का कोई आरंभ था? मेरा अनुमान है कि आपका आरंभ मेरे आरंभ के समान था। मेरा जीवन तब आरंभ हुआ जब मेरे पिता का एक शुक्राणु मेरी माता के एक अंडाणु से संयुक्त हुआ। निस्संदेह, अंडाणु और शुक्राणु का अपना-अपना आरंभ इससे पहले हुआ था, और मेरी माता तथा मेरे पिता का भी उससे पहले इसी प्रकार अलग-अलग आरंभ हुआ था। प्रत्येक जीवित प्राणी का आरंभ भी इसी प्रकार, किसी पूर्व जीवन से, हुआ प्रतीत होता है।

इसी प्रकार, पौधों का आरंभ भी किसी विशेष प्रकार के बीज से, या अन्य पौधों की जड़ों से निकली कोंपलों से, या संभवतः उन पौधों की कलमों से होता है जिन्हें मिट्टी में रोपा गया और जिनमें बाद में जड़ें विकसित हुईं।

हर निर्जीव वस्तु का भी किसी न किसी प्रकार का आरंभ प्रतीत होता है। मनुष्य-निर्मित वस्तुओं का स्रोत उन विभिन्न कच्चे पदार्थों तक खोजा जा सकता है, जिनसे वे बनाई जाती हैं। उन कच्चे पदार्थों का भी अपना कोई न कोई इतिहास होता है, और उनका भी किसी न किसी प्रकार का आरंभ होता है। वैज्ञानिकों ने पृथ्वी की आयु के बारे में विभिन्न अनुमान प्रस्तुत किए हैं, जो इस विचार से जुड़े हैं कि पृथ्वी का बहुत पहले कोई आरंभ हुआ था। यहाँ तक कि पूरे ब्रह्मांड के बारे में भी व्यापक रूप से यह माना जाता है कि उसका एक आरंभ है, और इस लोकप्रिय वैज्ञानिक दृष्टिकोण को "Big Bang Theory" वाक्यांश में संक्षेपित किया जाता है। यह हमें एक और स्वयंसिद्ध सत्य तक ले जाता है:

हर वस्तु का एक आरंभ होता है।

आगे मनन के लिए:

- क्या आप ऐसी किसी वस्तु के बारे में सोच सकते हैं, जो आज भौतिक रूप से अस्तित्व में है, लेकिन जिसका किसी न किसी प्रकार का आरंभ न हुआ हो?

अध्याय 11

विश्वास या नहीं?

यहाँ विश्वास की एक सरल परिभाषा है:

विश्वास: किसी ऐसी बात पर भरोसा, जिसे प्रत्यक्ष रूप से न देखा गया हो।

इस सरल परिभाषा के आधार पर, आइए कुछ ऐसी बातों पर विचार करें जिनमें विश्वास शामिल होता है:

- जब मैं किसी चौराहे पर हरी बत्ती में आगे बढ़ता हूँ, तो सामान्यतः मुझे विश्वास होता है कि आड़ी दिशा से आने वाले यातायात के लिए लाल बत्ती जल रही है (अन्यथा वे मेरी गाड़ी से टकरा सकते हैं)। इसमें विश्वास का तत्व शामिल है, क्योंकि मैं प्रायः उस लाल बत्ती को सीधे नहीं देख पाता जो आड़ी दिशा से आने वाले यातायात को रुकने का संकेत देती है। यह मानने के लिए विश्वास की आवश्यकता नहीं होती कि रुकने वाली बत्ती मौजूद है, क्योंकि उसे सामान्यतः देखा जा सकता है; लेकिन यह मानने के लिए कुछ विश्वास अवश्य चाहिए कि वह ठीक से काम कर रही है।
- जब मैं किसी कुर्सी पर बैठता हूँ, तो मैं प्रायः बिना हिचकिचाहट बैठ जाता हूँ, क्योंकि मुझे सामान्यतः विश्वास होता है कि वह कुर्सी मुझे सहारा देगी और मेरे भार से टूटेगी नहीं। यहाँ विश्वास कुर्सी के अस्तित्व के बारे में नहीं, बल्कि उसकी मजबूती के संबंध में होता है।
- जब मैं किसी पुल से होकर गुजरता हूँ, तो मुझे कुछ हद तक विश्वास होता है कि वह पुल गिर नहीं पड़ेगा। यदि मुझे कुछ विश्वास न होता कि वह पुल मेरा भार संभाल लेगा, तो मैं उस पर न जाता। फिर, विश्वास पुल के अस्तित्व के बारे में नहीं, बल्कि उसकी मजबूती और विश्वसनीयता के संबंध में होता है।
- जब मैं किसी बस स्टॉप पर इस आशा में प्रतीक्षा करता हूँ कि कोई बस मुझे कहीं ले जाएगी, तो मुझे कम-से-कम इतना विश्वास होता है कि बस आएगी, यद्यपि उसके पास आने तक मैं उसे सीधे आते हुए नहीं देख पाता। यदि मुझे बस व्यवस्था पर विश्वास न होता, तो मैं बस के आने की प्रतीक्षा ही न करता।
- जो लोग प्राकृतिकवाद के दर्शन का अनुसरण करते हैं, वे सामान्यतः यह विश्वास रखते हैं कि ब्रह्मांड में जो कुछ भी घटित होता है, उसे प्राकृतिक वैज्ञानिक सिद्धांतों से समझाया जा सकता है। इसमें विश्वास शामिल है, क्योंकि जो कुछ भी घटित होता है उसे कोई भी व्यक्ति प्रत्यक्ष रूप से पूरी तरह देख

नहीं सकता, उसकी संपूर्ण व्याख्या करना तो और भी दूर की बात है।

- जो लोग अलौकिक बातों पर विश्वास करते हैं, वे सामान्यतः मानते हैं कि प्राकृतिक विज्ञान उन सभी बातों की व्याख्या नहीं कर सकता जिन्हें वे देखते और अनुभव करते हैं। वे किसी अलौकिक सत्ता या वस्तु में किसी-न-किसी स्तर का विश्वास रखते हैं, जिसे प्रत्यक्ष रूप से देखा नहीं जा सकता (कम-से-कम सीधे, एकरूप और बार-बार दोहराए जा सकने वाले ढंग से तो नहीं)।

आप मेरे कुछ उदाहरणों पर आपत्ति कर सकते हैं। बहुत से लोगों ने कभी “विश्वास” को लाल-पीली-हरी बत्तियों से होकर गुजरने, कुर्सियों पर बैठने, और पुलों पर से यात्रा करने जैसी बातों से नहीं जोड़ा है। संभव है कि आपको ऐसी चीज़ों की सुदृढ़ता पर इतना अधिक भरोसा हो कि जब आप उन पर निर्भर करते हैं, तब आप यह न समझें कि उसमें भी विश्वास शामिल है। फिर भी, यदि आपने ऐसी चीज़ों की सुदृढ़ता को प्रत्यक्ष रूप से सत्यापित नहीं किया है, तो जब आप उनकी सुदृढ़ता पर निर्भर करते हैं, तब मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि आप “ऐसी किसी बात में विश्वास” रखते हैं जिसे प्रत्यक्ष रूप से नहीं देखा गया है। मैं ऐसी प्रबल निश्चितता को यह कहने के बजाय कि इसमें विश्वास का कोई स्थान नहीं है, “प्रबल विश्वास” कहूँगा।

इन उदाहरणों से हम देख सकते हैं कि विभिन्न बातों में हमारे विश्वास की दृढ़ता प्रायः समान प्रकार की बातों के साथ हुए हमारे पूर्व अनुभव पर निर्भर करती है। जिन लोगों के नीचे कभी कुर्सी टूट गई हो, या जिनके नीचे कोई पुल गिर पड़ा हो, या जो stop light के विफल हो जाने के कारण घायल हुए हों, उनमें सामान्यतः ऐसी चीज़ों के प्रति उन लोगों की अपेक्षा कम विश्वास होता है जिन्होंने ऐसी विफलताओं का अनुभव नहीं किया है।

उपरोक्त उदाहरणों से, मुझे लगता है कि यह स्पष्ट है कि जीवन के अनेक क्षेत्रों में हर व्यक्ति कुछ न कुछ बातों पर किसी न किसी सीमा तक विश्वास रखता है। यह हमें एक और स्वयंसिद्ध सत्य तक ले जाता है:

हर व्यक्ति को कुछ न कुछ बातों पर किसी-न-किसी स्तर का विश्वास होता है।

आगे मनन के लिए:

- ऐसी कौन-सी बातें हैं जिन पर आप विश्वास करते हैं और जिनमें विश्वास का तत्व शामिल है?

अध्याय 12

आध्यात्मिक लोक है या नहीं?

कुछ लोग मानते प्रतीत होते हैं कि यदि किसी चीज़ को सीधे देखा या मापा नहीं जा सकता, तो वह अस्तित्व में नहीं है।

मुझे यह दृष्टिकोण अजीब लगता है, क्योंकि विज्ञान में बहुत-सी ऐसी बातों को स्वीकार किया जाता है जिन्हें सीधे देखा या मापा नहीं जा सकता। उदाहरण के लिए, रेडियो तरंगों को लीजिए। क्या आपको विश्वास है कि उनका अस्तित्व है? क्यों, या क्यों नहीं? क्या आपने कभी किसी रेडियो तरंग को देखा या महसूस किया है? मैंने तो नहीं, और मुझे नहीं लगता कि आपने भी किया है। फिर भी, मुझे लगता है कि आप उनके अस्तित्व पर विश्वास करते हैं। क्यों? संभवतः इसलिए कि जब भी आप रेडियो सुनते हैं या रेडियो तरंगों पर आधारित किसी भी प्रकार के वायरलेस संचार का उपयोग करते हैं, तो आप उनके अस्तित्व के प्रमाणों का अनुभव करते हैं। ये अप्रत्यक्ष प्रमाण आपको इस बात पर विश्वास करने के लिए प्रेरित करते हैं कि रेडियो तरंगें अस्तित्व में हैं।

उसी प्रकार, क्या हमारी यह असमर्थता कि हम किसी आध्यात्मिक लोक को सीधे देख या अनुभव नहीं कर सकते, यह सिद्ध करती है कि वह अस्तित्व में नहीं है? बिल्कुल नहीं। फिर भी, जिन बातों को सीधे देखा नहीं जा सकता, उन पर विश्वास करने के लिए विवेकशील लोगों के सामने कुछ युक्तिसंगत प्रमाण अवश्य होने चाहिए—चाहे हम रेडियो तरंगों की बात कर रहे हों, किसी आध्यात्मिक लोक की, या किसी और वस्तु की। तो आइए, आध्यात्मिक लोक के अस्तित्व के समर्थन में कुछ प्रमाणों पर विचार करें।

- संभवतः सबसे प्रबल प्रमाण हजारों वर्षों के दौरान करोड़ों लोगों की मान्यताओं और अनुभवों में मिलता है। लगभग सभी संस्कृतियों ने हर काल में किसी-न-किसी प्रकार के आध्यात्मिक लोक में विश्वास किया है। इसके विपरीत ठोस प्रमाण के बिना इतने लोगों के अनुभवों को पूरी तरह नज़रअंदाज़ करना हमारी ओर से कुछ अहंकारपूर्ण होगा। यदि वास्तव में कोई आध्यात्मिक लोक है ही नहीं, तो क्या इतने वर्षों तक इतने अधिक लोग इस विषय में भ्रम में जीते रहे हो सकते हैं? मुझे ऐसा नहीं लगता।
- आज जीवित लाखों लोग (और संभवतः अरबों लोग) दावा करते हैं कि उन्हें ऐसे आध्यात्मिक अनुभव हुए हैं जिनमें आध्यात्मिक लोक शामिल है। क्या वे सभी लोग

अपने अनुभवों के बारे में भ्रमित हैं? मुझे यह अत्यंत असंभाव्य लगता है कि ऐसे सभी दावे पूरी तरह निराधार हों।

- जो लोग मृत्यु के निकट गए और फिर जीवित लौट आए, वे अक्सर मृत्यु के बाद के जीवन से जुड़े अनुभवों की गवाही देते हैं, जिनमें सामान्यतः आध्यात्मिक लोक शामिल होता है। क्या ऐसे सभी अनुभव निराधार हैं? मुझे ऐसा नहीं लगता।
- बहुत-से लोग दावा करते हैं कि उन्होंने ऐसे “चमत्कार” देखे हैं जिन्हें प्राकृतिक विज्ञान से समझाया नहीं जा सकता। जो लोग ऐसे चमत्कारों का अनुभव करते हैं, वे अक्सर उनका संबंध किसी प्रकार की आध्यात्मिक शक्ति और एक आध्यात्मिक लोक से जोड़ते हैं।
- यदि वैज्ञानिक दृष्टिकोण से देखें, तो आधुनिक “string theory” यह संकेत करती है कि ब्रह्मांड में उन आयामों से कहीं अधिक आयाम हैं, जिनसे हम प्रत्यक्ष रूप से परिचित हैं। “string theory” के मॉडलों को समझाने के लिए यह प्रस्तावित किया गया है कि एक समानांतर लोक भी अस्तित्व में है, जिससे हम अधिकांशतः अनभिज्ञ हैं। यहाँ तक कि आधुनिक विज्ञान भी उस चीज़ के अस्तित्व की ओर झुकता हुआ प्रतीत होता है, जिसे मैं “आध्यात्मिक लोक” कहता हूँ।
यह सारा प्रमाण मानो एक और स्वयंसिद्ध सत्य की ओर ले जाता है:

आध्यात्मिक लोक वास्तव में अस्तित्व में है।

आगे मनन के लिए:

- क्या आपके अपने ऐसे कोई व्यक्तिगत अनुभव रहे हैं जो आध्यात्मिक लोक के अस्तित्व का प्रमाण हों?

अध्याय 13 सृष्टि या असृष्टि?

हमने पहले देखा था कि कुछ बातों के संबंध में हर व्यक्ति किसी-न-किसी स्तर पर विश्वास रखता है। हमने यह भी देखा कि प्राकृतिकवाद में विश्वास (कि सब कुछ प्राकृतिक विज्ञान से समझाया जा सकता है) और अलौकिक शक्तियों में विश्वास (कि कुछ बातें प्राकृतिक विज्ञान से नहीं समझाई जा सकतीं), दोनों में विश्वास शामिल होता है। केवल एक “अज्ञेयवादी” (जो ऐसी बातों पर कोई निश्चित मत नहीं रखता) ही यह दावा कर सकता है कि ऐसी बातों के बारे में उसका विश्वास नहीं है।

जब “सृष्टि या कोई सृष्टि नहीं” के प्रश्न पर विचार किया जाता है, तो वहाँ भी विश्वास का एक समान प्रश्न सामने आता है। हममें से कोई भी सीधे यह नहीं देख सकता कि “आरंभ में” क्या हुआ था, इसलिए ब्रह्मांड और जीवन कैसे अस्तित्व में आए, इस संबंध में हमारे जो भी विश्वास हैं, उनमें किसी न किसी स्तर पर विश्वास शामिल होता है।

मेरे लिए, सृष्टि के पक्ष में सबसे बड़ा प्रमाण (जो यह संकेत देता है कि कोई अलौकिक शक्ति कार्य कर रही है) विज्ञान है। विज्ञान के माध्यम से प्राकृतिक वस्तुओं के विषय में मानवजाति का ज्ञान बहुत अधिक बढ़ गया है। बहुत-सी बातें, जिन्हें कभी सरल समझा जाता था, अब अत्यंत जटिल सिद्ध हुई हैं। जीवन की गहन जटिलता और ब्रह्मांड की जटिलता मुझे इतनी विशाल प्रतीत होती है कि उनका केवल प्राकृतिक शक्तियों, समय और संयोग के आधार पर घटित हो जाना मानना कठिन लगता है। जब मैं एक जटिल ब्रह्मांड और इस दुनिया में जटिल जीवन को देखता हूँ, तो मुझे “सृष्टि” दिखाई देती है, न कि कोई ऐसी चीज़ जो केवल संयोग और समय का परिणाम हो।

कुछ लोग, जो इससे भिन्न सोचते हैं, चार्ल्स डार्विन के उस दृष्टिकोण को अपनाते हैं, जिन्होंने “The Origin of Species” नामक पुस्तक लिखी थी (जो मूलतः 1859 में प्रकाशित हुई थी)। उस पुस्तक में श्री डार्विन इस विचार का समर्थन करते हैं कि जटिल जीवन बहुत लंबे कालखंडों में समय और संयोग के माध्यम से विकसित हुआ, और इसमें किसी अलौकिक सृष्टिकर्ता की कोई भूमिका नहीं थी। पृष्ठ 194 पर (P.F. Collier & Son द्वारा प्रकाशित संस्करण में, कॉपीराइट 1909, चार्ल्स डब्ल्यू. एलियट द्वारा संपादित) वे लिखते हैं:

“यदि यह सिद्ध किया जा सके कि कोई भी जटिल अंग ऐसा अस्तित्व में है, जो असंख्य, क्रमिक, सूक्ष्म परिवर्तनों द्वारा संभव ही नहीं बन सकता था, तो मेरा सिद्धांत पूर्णतः धराशायी हो जाएगा। परंतु मुझे ऐसा कोई उदाहरण नहीं मिलता।”

यद्यपि इस बात के बहुत से प्रमाण हैं कि “microevolution” वास्तव में होती है (जैसा कि श्री डार्विन ने सही ही देखा था), मेरी जानकारी के अनुसार किसी ने भी कभी “महाविकास” को घटित होते नहीं देखा है (अर्थात् एक प्रकार का जीव दूसरे प्रकार के जीव में बदल जाए, या निर्जीव पदार्थ से जीवन विकसित हो जाए)। किसी ने भी कभी किसी “जटिल अंग” को किसी दूसरे प्रकार के अंग से “असंख्य, क्रमिक, सूक्ष्म परिवर्तनों द्वारा” बनते हुए नहीं देखा है। श्री डार्विन स्वयं को प्राकृतिकवाद की मान्यताओं में विश्वास रखने वाला व्यक्ति दिखाते हैं, क्योंकि वे मानते हैं कि ऐसी बातें अतीत में केवल संयोग और समय के कारण हुईं, जबकि आज कहीं भी ऐसी घटनाएँ होती हुई नहीं देखी जातीं।

श्री डार्विन के समय के बाद से, आणविक जीवविज्ञान ने दिखाया है कि केवल एक जीवित कोशिका भी अविश्वसनीय रूप से जटिल है। विज्ञान आज भी निर्जीव अकार्बनिक पदार्थ से एक भी जीवित कोशिका उत्पन्न नहीं कर सकता; और न ही विज्ञान अभी तक यह पूरी तरह समझा सका है कि कोशिकाएँ कैसे कार्य करती हैं। मेरे मत में, यह स्वयंसिद्ध है कि आज अस्तित्व में हर जीवित कोशिका इतनी जटिल है कि वह निर्जीव पदार्थ से “असंख्य, क्रमिक, सूक्ष्म परिवर्तनों द्वारा संभवतः बनी हो” ही नहीं सकती। मैं श्री डार्विन के अपने ही कथन के आधार पर यह निष्कर्ष निकालता हूँ कि आधुनिक विज्ञान ने उनके सिद्धांत को “पूर्णतः ध्वस्त” सिद्ध कर दिया है। यह हमें एक और स्वयंसिद्ध सत्य तक ले जाता है:

एक सृष्टि है।

आगे मनन के लिए:

- आप क्या सोचते हैं? क्या यह संभव प्रतीत होता है कि हमारा जटिल ब्रह्मांड, जिसमें जटिल जीवन विद्यमान है, केवल समय और संयोग से अस्तित्व में आ गया हो, जबकि कोई अलौकिक शक्ति कार्यरत न रही हो?

सृष्टिकर्ता या कोई सृष्टिकर्ता नहीं?

पिछले अध्याय में मैंने यह निष्कर्ष निकाला था कि एक सृष्टि है, और यह कि जटिल जीवन से युक्त जटिल ब्रह्मांड केवल समय और संयोग से अस्तित्व में नहीं आ सकता था। तर्क की दृष्टि से इसके लिए किसी न किसी प्रकार के अलौकिक सृष्टिकर्ता की आवश्यकता है। एक स्तर पर, वह सरल तर्क एक और स्वयंसिद्ध सत्य के लिए पर्याप्त होना चाहिए। लेकिन पहले, आइए “सृष्टिकर्ता” की इस अवधारणा को थोड़ा और विस्तार से समझें।

क्या आपने कभी प्रकाश-संश्लेषण के चमत्कार पर विचार किया है? प्रकाश-संश्लेषण वह शब्द है जिसका उपयोग यह बताने के लिए किया जाता है कि किस प्रकार कुछ पादप कोशिकाएँ सूर्यप्रकाश की ऊर्जा, कार्बन डाइऑक्साइड (CO₂), और जल (H₂O) को मिलाकर जटिल कार्बनिक अणु बनाती हैं (और उस प्रक्रिया में प्रायः ऑक्सीजन एक उप-उत्पाद के रूप में उत्पन्न होती है)। जटिल कार्बनिक अणु जीवन के आधार-घटक भी हैं और रासायनिक रूप में ऊर्जा के भंडारण का साधन भी प्रदान करते हैं। जीवित रहने के लिए हमारे शरीर को इन जटिल कार्बनिक अणुओं की नियमित आपूर्ति चाहिए। हम प्रायः उन विभिन्न जटिल कार्बनिक अणुओं को, जिनका हम सेवन करते हैं, “भोजन” कहते हैं। यद्यपि भोजन का एक लाभ यह है कि उससे हमारे शरीर को आवश्यक विविध विटामिन और खनिज मिलते हैं, फिर भी भोजन का एक बहुत बड़ा कार्य बस यह है कि वह हमें जीवन-निर्वाह के लिए ऊर्जा का स्रोत प्रदान करे। हमारे शरीर, जीवन को बनाए रखने के लिए, जटिल कार्बनिक अणुओं में संचित रासायनिक ऊर्जा का उपयोग करते हैं।

ध्यान दें कि “भोजन” की मेरी परिभाषा में मैं उन पदार्थों को बाहर रख रहा हूँ जो हमें ऊर्जा नहीं देते, जैसे नमक और पानी (यद्यपि ये जटिल कार्बनिक अणुओं के साथ मिश्रित हो सकते हैं, और उस समग्र मिश्रण को भी “भोजन” कहा जा सकता है)। इस चर्चा में “भोजन” से मुख्यतः उन चीज़ों का आशय है जिन्हें हम खाते हैं और जो हमारे शरीर को जीवन बनाए रखने के लिए ऊर्जा देती हैं।

क्या आपने कभी कोई अकार्बनिक भोजन खाया है? “अकार्बनिक भोजन” से मेरा आशय ऐसे जटिल अणुओं से है, जो पौधों और पशुओं से प्राप्त भोजन में पाए जाने वाले जटिल कार्बनिक अणुओं के समान हों, पर जिन्हें मनुष्य केवल अकार्बनिक पदार्थों का उपयोग करके बनाते हों—अर्थात् उन जटिल अणुओं में कार्बन डाइऑक्साइड और पानी को बदलने की प्रक्रिया में पौधों का उपयोग न

किया गया हो। मुझे पूरा विश्वास है कि मैंने कभी कोई अकार्बनिक भोजन नहीं खाया है, और मुझे नहीं लगता कि आपने भी खाया है। ऐसा क्यों है? क्योंकि इस समय मानवजाति अकार्बनिक पदार्थों से भोजन बनाने में असमर्थ है, कम-से-कम किसी ऐसी मात्रा में तो नहीं जो वास्तव में महत्वपूर्ण हो। हाँ, कुछ वैज्ञानिकों ने विशेष प्रयोगशाला प्रक्रियाओं का उपयोग करके अकार्बनिक पदार्थों से सरल शर्करा अणु बनाए हैं (प्रकाश संश्लेषण द्वारा नहीं), पर बात लगभग वहीं तक सीमित है। हम अभी भी अपनी खाद्य-आपूर्ति के लिए पूरी तरह पौधों पर निर्भर हैं। (ध्यान दें कि जब पूरी खाद्य-श्रृंखला पर विचार किया जाता है, तो पशुओं से प्राप्त भोजन के जटिल कार्बनिक अणुओं का स्रोत भी अंततः पौधे ही होते हैं।) केवल पौधे ही प्रकाश संश्लेषण के माध्यम से दक्षतापूर्वक भोजन बना सकते हैं।

कुछ लोग सोचते हैं कि प्रकाश संश्लेषण का यह अद्भुत चमत्कार समय और संयोग से अपने-आप होने लगा। किन्तु समय और संयोग से प्रकाश संश्लेषण के घटित होने का कभी अवलोकन नहीं किया गया है। इसके विपरीत, सामान्यतः देखा जाता है कि सूर्यप्रकाश जटिल अणुओं का निर्माण नहीं करता, बल्कि उन्हें विघटित करता है। मेरे लिए यह तथ्य कि पौधे सूर्यप्रकाश, कार्बन डाइऑक्साइड और जल से सीधे भोजन बनाते हैं, एक बुद्धिमान "सृष्टिकर्ता" के अस्तित्व का प्रमाण है, जो मानवजाति से कहीं अधिक बुद्धिमान है।

अब मान लीजिए कि वैज्ञानिक अंततः अकार्बनिक पदार्थों से भोजन बनाने के उपाय विकसित कर लें। क्या इससे मेरा तर्क निरस्त हो जाएगा? नहीं, इससे केवल इतना ही सिद्ध होगा कि प्रकाश-संश्लेषण जैसी जटिल प्रक्रियाएँ केवल बहुत अधिक बुद्धिमत्ता की सहायता से ही संभव होती हैं, केवल समय और संयोग से नहीं।

यह हमें एक और स्वयंसिद्ध सत्य तक ले आता है:

एक सृष्टिकर्ता है।

आगे मनन के लिए:

- क्या आपने कभी कोई अकार्बनिक भोजन देखा है या खाया है?

अध्याय 15

क्या सृष्टि और सृष्टिकर्ता एक ही हैं?

पिछले अध्याय में हम नास्तिकता के क्षेत्र से (जो यह मानती है कि कोई अलौकिक सृष्टिकर्ता अस्तित्व में नहीं है) आगे बढ़कर किसी न किसी रूप में एक अलौकिक सृष्टिकर्ता में विश्वास तक पहुँचे थे। यह हमें या तो ईश्वरवाद के क्षेत्र में ले जाता है (अर्थात् एक या अधिक “देवताओं” में विश्वास, जो भौतिक सृष्टि से भिन्न हैं) या सर्वेश्वरवाद के क्षेत्र में (अर्थात् यह विश्वास कि समस्त सृष्टि दैवी है और एक ही ईश्वर का भाग है)।

अब प्रश्न यह है: क्या भौतिक सृष्टि, जिसका अनुभव हम अपनी इंद्रियों से करते हैं, किसी अलौकिक सृष्टिकर्ता या सृष्टिकर्ताओं से भिन्न है (ईश्वरवाद), या भौतिक सृष्टि केवल किसी अलौकिक सृष्टिकर्ता का ही भाग है (सर्वेश्वरवाद)?

मुझे सर्वेश्वरवाद में कई ऐसी समस्याएँ दिखाई देती हैं जिनका समाधान असंभव-सा प्रतीत होता है। पहली समस्या बुराई की है। यदि सब कुछ दैवी है और एक ही परमेश्वर का अंश है, तो भले और बुरे की अवधारणा अर्थहीन हो जाती है। यह हमारे अनुभव के विपरीत है (जैसा कि पूर्ववर्ती स्वयंसिद्ध सत्यों में व्यक्त किया गया है)।

दूसरी समस्या पृथ्वी पर सभी मनुष्यों के पृथक व्यक्तित्वों की है। पृथ्वी पर प्रत्येक व्यक्ति एक अद्वितीय, स्वयं-निर्देशित सत्ता प्रतीत होता है, जो प्रायः अन्य लोगों के साथ संघर्ष में रहता है। इसके अतिरिक्त, विभिन्न लोगों की धार्मिक मान्यताएँ भी बहुत भिन्न-भिन्न हैं। यह समझना कठिन है कि ये वास्तविकताएँ इस विचार के साथ कैसे मेल खाती हैं कि सब कुछ और सब लोग दैवी हैं तथा एक ही परमेश्वर का अंश हैं।

तीसरी बात, आधुनिक विज्ञान यह दिखाता है कि अकार्बनिक, निर्जीव पदार्थ सामान्यतः भौतिकी और रसायन विज्ञान के कठोर नियमों का पालन करता है। यह समझना कठिन है कि अकार्बनिक पदार्थ को दैवी तथा एक ही परमेश्वर का अंश कैसे माना जा सकता है।

चौथी बात, आधुनिक जीवविज्ञान जीवन और बुद्धि को स्पष्ट रूप से परिभाषित इकाइयों में विद्यमान मानता है, जैसे पृथक पौधे या पृथक पशु। यह इस विचार के विपरीत प्रतीत होता है कि समस्त जीवन दिव्य है और एक ही परमेश्वर का अंश है।

इससे मैं एक और स्वयंसिद्ध सत्य पर पहुँचता हूँ:

सृष्टि अपने सृष्टिकर्ता से स्पष्ट रूप से पृथक है।

आगे मनन के लिए:

- क्या आप ऐसे अन्य प्रमाणों के बारे में सोच सकते हैं जो इस प्रश्न से संबंधित हों कि सृष्टि अपने सृष्टिकर्ता से स्पष्ट रूप से पृथक है या नहीं?

अध्याय 16 परमेश्वर या देवता?

हाल के अध्यायों से यह निष्कर्ष निकला है:

- एक सृष्टि है।
- एक अलौकिक क्षेत्र है।
- एक अलौकिक सृष्टिकर्ता है।
- अलौकिक सृष्टिकर्ता सृष्टि से भिन्न है।

इस प्रकार, हम नास्तिकता (कोई अलौकिक सृष्टिकर्ता नहीं) और सर्वेश्वरवाद (सब कुछ परमेश्वर है) के क्षेत्र से निकलकर किसी न किसी रूप के ईश्वरवाद तक पहुँच गए हैं (अर्थात् ऐसा विश्वास कि एक या अधिक "देवता" भौतिक सृष्टि से भिन्न हैं)। भ्रम से बचने के लिए, आइए "god" (छोटे "g" के साथ) और "God" (बड़े "G" के साथ) शब्दों को स्पष्ट कर लें:

god: एक अलौकिक सत्ता, जिसके पास किसी प्रकार की अलौकिक शक्ति हो।

God: सभी अलौकिक सत्ताओं में महानतम, और सब कुछ का सृष्टिकर्ता (जिसमें सभी निम्नतर "देवता" भी शामिल हैं)।

हम पहले यह देख चुके हैं कि आध्यात्मिक लोक का अस्तित्व स्वयंसिद्ध है। आध्यात्मिक लोक की स्वीकृति प्रायः उन अलौकिक प्राणियों की स्वीकृति से जुड़ी होती है, जिनका अस्तित्व उसी आध्यात्मिक लोक में है। लगभग हर धर्म इसे स्वीकार करता है। उदाहरण के लिए, ईसाई, यहूदी और मुस्लिम परंपराएँ सामान्यतः स्वर्गदूतों और दुष्ट आत्माओं के अस्तित्व को मानती हैं। स्वाभाविक मानवीय दृष्टिकोण से देखें तो इनमें से प्रत्येक "ऐसा अलौकिक प्राणी है, जिसके पास किसी प्रकार की अलौकिक शक्ति है," जो ऊपर दी गई "परमेश्वर" की परिभाषा से मेल खाता है। हिन्दू धर्म, तथा अधिकांश अन्य पूर्वी धर्म भी, अनेक देवताओं के अस्तित्व को मानते हैं। इसी प्रकार, Satanism, Wicca, और विभिन्न अन्य गूढ़ धर्म भी सामान्यतः अनेक अलौकिक प्राणियों को मानते हैं, जिनके पास अलौकिक शक्तियाँ होती हैं। इससे मैं यह निष्कर्ष निकालता हूँ:

अलौकिक शक्तियों से युक्त अनेक अलौकिक प्राणी आध्यात्मिक लोक में अस्तित्व रखते हैं।

यद्यपि यह निष्कर्ष एक अच्छी प्रगति प्रतीत हो सकता है, फिर भी हमारे सामने यह प्रश्न बना रहता है कि क्या एक ऐसा परमेश्वर है जो अन्य सभी से महान है, और क्या वही एक परमेश्वर अन्य सभी देवताओं का स्रोत है, तथा अंततः समस्त सृष्टि का रचयिता भी।

बहुत से लोग ऐसे धर्मों का पालन करते हैं जिन्हें सामान्यतः अनेक देवताओं में विश्वास रखने वाला माना जाता है। हालाँकि, इनमें से बहुत से धर्म, जिनमें हिंदू धर्म की अनेक शाखाएँ भी शामिल हैं, एक ऐसे परमेश्वर में भी विश्वास करते हैं जो अन्य सबसे महान है और जिसे प्रायः सब कुछ का सृष्टिकर्ता माना जाता है।

आगे इस पर भी विचार कीजिए: उन धर्मों में जो सब कुछ की रचना करने वाले एक परमेश्वर में विश्वास नहीं करते, विभिन्न देवताओं को प्रायः एक-दूसरे से कुछ हद तक स्वतंत्र समझा जाता है, और वे अक्सर एक-दूसरे के विरोध में होते हैं, ठीक वैसे ही जैसे लोग भी प्रायः परस्पर संघर्ष में रहते हैं। जिस प्रकार लोगों की समितियों को अक्सर सहमति बनाने और आगे बढ़ने में कठिनाई होती है, उसी प्रकार इन धर्मों के देवताओं के बारे में भी ऐसा ही प्रतीत होता है। ऐसी स्थिति मुझे उस विराट, सुव्यवस्थित जटिलता के साथ असंगत प्रतीत होती है जिसे हम ब्रह्मांड में देखते हैं। यह कल्पना करना कठिन है कि ब्रह्मांड की रचना अनेक देवताओं द्वारा हुई हो, जिनमें से प्रत्येक की इस बात पर अलग-अलग राय हो कि वस्तुएँ कैसी होनी चाहिए।

हम पहले देख चुके हैं कि एक सुव्यवस्थित ब्रह्मांड में जटिल जीवन किसी न किसी प्रकार के सृष्टिकर्ता की अपेक्षा करता है। चूँकि ऐसा लगता है कि अनेक छोटे देवता ऐसे सृष्टिकर्ता की पर्याप्त व्याख्या नहीं कर सकते, इसलिए यह निष्कर्ष निकलता है कि एक ही परमेश्वर होना चाहिए, जिसने सब वस्तुओं की रचना की है (अन्य सभी “देवताओं” सहित)। यह हमें एक अन्य निष्कर्ष तक ले आता है:

एक ही परमेश्वर है जो अन्य सभी “देवताओं” से महान है।

आगे मनन के लिए:

- क्या आप “एक ही परमेश्वर” के इस निष्कर्ष को स्वीकार करते हैं? यदि नहीं, तो इस विषय में आप क्या मानते हैं, और अपने विश्वासों के समर्थन में आपके पास क्या प्रमाण है?

अध्याय 17

एक स्वयंसिद्ध निष्कर्ष

कई वर्ष पहले, मैंने Oregon State University में विद्युत अभियांत्रिकी का अध्ययन किया था। मेरे लगभग सभी अभियांत्रिकी अध्ययन उस पर आधारित थे, जिसे मैं “कठोर विज्ञान” मानता हूँ, जैसे गणित और भौतिकी। निस्संदेह, “कठोर विज्ञान” और “कोमल विज्ञान” के बीच का विभाजन विवादास्पद हो सकता है। मेरे विचार में “कोमल विज्ञान” में दर्शनशास्त्र, मनोविज्ञान, धर्म और राजनीति विज्ञान जैसे क्षेत्र शामिल हैं। मेरे लिए “कठोर” और “कोमल” विज्ञान के बीच का अंतर इस बात पर निर्भर करता है कि उनकी मुख्य अवधारणाएँ किस सीमा तक प्रेक्षणीय, सटीक, सिद्ध करने योग्य और पुनरावर्तनीय हैं।

मुझे अपने विज्ञान, गणित और इंजीनियरिंग की कक्षाओं के संबंध में “सत्य” को लेकर किसी भी गंभीर मतभेद की याद नहीं है। जब कठोर विज्ञान आधार होता है, तब विवाद की गुंजाइश बहुत कम रहती है; बात मुख्यतः उसे समझने और यह सीखने की होती है कि उसे व्यावहारिक रूप से कैसे लागू किया जाए। निस्संदेह, लोग किसी समाधान को लागू करने के सर्वोत्तम तरीके पर बहस कर सकते हैं (जैसे नदी पर सेतु बनाने के लिए किस प्रकार का पुल बनाया जाए), लेकिन उसके आधारभूत कठोर विज्ञान (वे गणनाएँ और सिद्धांत जो यह सुनिश्चित करते हैं कि पुल ढहे नहीं) सामान्यतः अच्छी तरह स्थापित होते हैं। यदि ऐसा न होता, तो लोग उचित निश्चितता के साथ ऐसे पुलों की रूपरेखा नहीं बना पाते जो ढहें नहीं।

कठोर विज्ञानों का एक सुंदर पक्ष है, जिसकी मैंने सराहना करना सीखा है: कठोर विज्ञान से संबंधित अधिकांश प्रकार के विश्लेषणों में सामान्यतः केवल एक ही सही उत्तर होता है। मेरा मानना है कि इसका संबंध इस बात से है कि मैं “कठोर” और “मृदु” विज्ञान को कैसे परिभाषित करता हूँ। कठोर विज्ञान में, किसी समस्या के गणितीय विश्लेषण तक पहुँचने के लिए प्रायः अनेक भिन्न मार्ग अपनाए जा सकते हैं, लेकिन उत्तर हमेशा एक ही होना चाहिए (आमतौर पर केवल एक ही सही उत्तर होता है)। यदि विभिन्न दिशाओं से पहुँचने पर समाधान अलग-अलग निकलते हैं, तो लगभग निश्चित रूप से कोई त्रुटि हुई है (या फिर, मेरी परिभाषा के अनुसार, हम कठोर विज्ञान से नहीं निपट रहे हैं)।

कुछ कम मात्रा में ही सही, समान परिणामों तक विभिन्न दिशाओं से पहुँचने का यही पैटर्न व्यवहार में मृदु विज्ञानों, जैसे दर्शन और धर्म, में भी दिखाई देना चाहिए। उदाहरण के लिए, इस दार्शनिक प्रश्न पर विचार कीजिए:

“ब्रह्मांड का अस्तित्व क्यों है?”

पिछले अध्याय अवलोकन और तर्क के माध्यम से निम्नलिखित तीन स्वयंसिद्ध सत्यों पर पहुँचे हैं:

- हर वस्तु का एक आरंभ होता है।
- एक सृष्टि है।
- एक सृष्टिकर्ता है।

हम इन सत्यों को सरलता से संयोजित कर सकते हैं और इस निष्कर्ष पर पहुँच सकते हैं कि ब्रह्मांड का अस्तित्व क्यों है:

आरंभ में, एक सृष्टिकर्ता ने सृष्टि की रचना की।

वैकल्पिक रूप से, कोई व्यक्ति इस प्रश्न के उत्तर के लिए धर्मग्रंथ में देख सकता है: “ब्रह्मांड का अस्तित्व क्यों है?” बाइबल का पहला पद इस प्रकार है:

आरंभ में परमेश्वर ने आकाश और पृथ्वी की रचना की। —उत्पत्ति 1:1

ये दोनों उत्तर व्यवहारतः एक ही हैं। दो भिन्न मार्गों से हम समान निष्कर्षों तक पहुँचे हैं। पहला मार्ग अवलोकन और तर्क का था। दूसरा मार्ग उत्तर के लिए धर्मग्रंथ की ओर देखने का था। मूलतः, हमने स्वयंसिद्ध सत्य के आधार पर पाया है कि बाइबल का पहला पद सत्य है।

आगे मनन के लिए:

- क्या आप इस कथन से सहमत हैं कि “आदि में परमेश्वर ने आकाश और पृथ्वी की रचना की”?

भाग 2

विश्वास और विज्ञान

विश्वास और विज्ञान के संबंध को लेकर बहुत भ्रम दिखाई देता है। यह भ्रम लोगों को स्वयंसिद्ध आध्यात्मिक सत्य को अपनाने से रोकता है। अतः, इस खंड में मैं “विश्वास” और “विज्ञान” के संबंध को स्पष्ट करने का प्रयास करूँगा।

हम इस विषय पर निम्नलिखित रूपरेखा के अनुसार विचार करेंगे:

- विश्वास के विषय में
- विज्ञान के विषय में
- विज्ञान में विश्वास?
- भ्रम
- विश्वास और भ्रम
- विज्ञान और भ्रम
- विश्वास और विज्ञान का संघर्ष

अध्याय 18

विश्वास के विषय में

अध्याय 11 में “विश्वास” की एक सरल परिभाषा दी गई थी:

विश्वास: किसी ऐसी बात पर भरोसा, जिसे प्रत्यक्ष रूप से न देखा गया हो।

निस्संदेह, अनेक अन्य शब्दों की तरह, “विश्वास” शब्द के भी कई और संभावित अर्थ और प्रयोग हो सकते हैं, जिन्हें यह परिभाषा पूरी तरह नहीं समेटती। लेकिन इस पुस्तक की चर्चा के संदर्भ में, जब मैं “विश्वास” शब्द का प्रयोग करता हूँ, तो मेरा अभिप्राय इसी परिभाषा से होता है।

इसके अतिरिक्त, “विश्वास रखना” वाक्यांश का अर्थ है ऐसी किसी बात पर विश्वास करना जिसे प्रत्यक्ष रूप से नहीं देखा गया हो।

“विश्वास” की इस परिभाषा के अनुसार, कोई व्यक्ति प्राकृतिक दुनिया की बातों के संबंध में भी और आध्यात्मिक लोक की बातों के संबंध में भी विश्वास रख सकता है (जैसा कि अध्याय 11 “विश्वास या अविश्वास” में कुछ चर्चा की गई है)। विश्वास की मुख्य बात यह है कि इसमें उन बातों पर विश्वास करना शामिल होता है जिन्हें प्रत्यक्ष रूप से नहीं देखा गया है, चाहे वे प्राकृतिक हों या अलौकिक।

इस परिभाषा के अनुसार, जब मैं किसी ऐसी बात पर विश्वास करता हूँ जिसके बारे में दूसरे लोग दावा करते हैं कि उन्होंने उसे प्रत्यक्ष रूप से देखा है, पर मैंने स्वयं उसे प्रत्यक्ष रूप से नहीं देखा, तो उसमें विश्वास शामिल होता है। यदि मुझे किसी विशेष बात के बारे में प्रत्यक्ष ज्ञान या अनुभव नहीं है, तो उस पर विश्वास करने में विश्वास शामिल होता है। मेरा मानना है कि आपके लिए भी यही बात सही है। उदाहरण के लिए: क्या आप मानते हैं कि किसी विशेष समाचार माध्यम द्वारा दी गई रिपोर्ट सत्य है? यदि ऐसा है, तो उस समाचार माध्यम की विश्वसनीयता और उसके द्वारा दी जाने वाली खबरों की सत्यता में आपका किसी न किसी स्तर का विश्वास है। आखिरकार, क्योंकि आप अधिकांश समाचारों को प्रत्यक्ष रूप से नहीं देखते, यह संभव है कि जो कुछ खबरें आप सुनते हैं उनमें से कुछ गढ़ी गई हों या उन्हें प्रस्तुत करने वालों के उद्देश्यों के अनुसार तोड़-मरोड़ दिया गया हो। परोक्ष रूप से मिली जानकारी पर विश्वास करने के लिए भी किसी न किसी स्तर के विश्वास की आवश्यकता होती है। और, निस्संदेह, केवल किसी बात को सत्य मान लेने से वह सत्य नहीं हो जाती। जिन बातों पर हम विश्वास रखते हैं, उनके विषय में हम धोखा खा सकते हैं (इस पर अध्याय 21, 22 और 23 में और चर्चा की जाएगी)।

ध्यान दें कि जिस व्यक्ति ने किसी घटना का प्रत्यक्ष अनुभव किया है, उसके लिए वह घटना विश्वास का विषय नहीं होती, क्योंकि उसने उसे स्वयं देखा है। किन्तु जो लोग उस घटना के बारे में केवल दूसरों से सुनते हैं, उनके लिए यह मानना कि वह घटना वास्तव में हुई थी, विश्वास का विषय होता है। ऐसी किसी घटना के संबंध में किसी व्यक्ति के विश्वास की दृढ़ता इस बात पर निर्भर करती है कि उस घटना के बारे में किस प्रकार का और कितना प्रमाण उपलब्ध है। प्रमाण जितने अधिक प्रबल होंगे, सामान्यतः उसके विषय में किसी का विश्वास उतना ही अधिक दृढ़ होगा। किसी विशेष जानकारी के स्रोत में किसी का जितना अधिक विश्वास होगा, वह उतनी ही सहजता से कही गई बात को सत्य मान लेगा।

एक सामान्य गलतफहमी है, जिसके प्रति हमें सचेत रहना चाहिए। हम अक्सर जानकारी के कुछ स्रोतों पर इतना अधिक विश्वास करते हैं कि यह तक नहीं सोचते कि उन्हें मानने में भी विश्वास शामिल है। वास्तव में, अधिकांश विद्यालय और शिक्षक मानो इस धारणा पर चलते हैं कि छात्रों को जो कुछ सिखाया जाए, उसे बिना प्रश्न किए बस स्वीकार कर लेना चाहिए। अक्सर छात्र शिक्षकों की कही हुई बातों को प्रामाणिक तथ्य मानकर, उनकी शिक्षा पर पूर्ण विश्वास के साथ, बस स्वीकार कर लेते हैं। मैं स्वयं भी इसका दोषी रहा हूँ, जितनी बार मैं स्वीकार करना चाहूँ उससे कहीं अधिक बार। मेरा सुझाव है कि हम सबको उन बातों के बारे में अधिक सावधान रहना चाहिए जिन्हें हम विश्वास के आधार पर स्वीकार करते हैं। हमारे लिए यह अच्छा होगा कि हम परोक्ष रूप से प्राप्त जानकारी को अंतिम सत्य मान लेने में उतावली न करें।

आगे मनन के लिए:

- ऐसी कौन-सी बातें हैं जिन पर आप विश्वास करते हैं, जबकि आपने उन्हें प्रत्यक्ष रूप से नहीं देखा है?
- ऐसी कौन-सी बातें हैं जिन्हें आप अपने प्रत्यक्ष अवलोकन के कारण सत्य जानते हैं?

अध्याय 19

विज्ञान के विषय में

अब आइए “विज्ञान” की एक सरल परिभाषा पर विचार करें:

विज्ञान: प्राकृतिक दुनिया और ब्रह्मांड के विषय में वह ज्ञान, जो प्रयोगों, अवलोकन और तर्क के आधार पर प्राप्त होता है।

फिर से, “विश्वास” शब्द की तरह, “विज्ञान” शब्द के भी अनेक अन्य संभावित प्रयोग हैं, जिन्हें यह परिभाषा अच्छी तरह नहीं समेटती। परंतु इस पुस्तक की चर्चा के संदर्भ में, जब मैं “विज्ञान” शब्द का प्रयोग करता हूँ, तो मेरा अभिप्राय इसी परिभाषा से है।

इस परिभाषा के अनुसार, “विज्ञान” “प्राकृतिक दुनिया और ब्रह्मांड” से संबंधित है, न कि आध्यात्मिक लोक से। जिस सीमा तक कोई वस्तु “आध्यात्मिक लोक” का भाग है, उस सीमा तक वह विज्ञान के क्षेत्र से परे है, क्योंकि विज्ञान केवल “प्राकृतिक दुनिया और ब्रह्मांड” से संबंधित है।

ध्यान दें कि “विज्ञान” उस ज्ञान से संबंधित है जो “प्रयोगों, अवलोकन और तर्क” से प्राप्त होता है। इसे और स्पष्ट करने के लिए यह भी जोड़ा जा सकता है कि विज्ञान उन प्रयोगों और अवलोकनों पर आधारित होता है जिन्हें एकसमान परिणामों के साथ दोहराया जा सके। यदि प्रायोगिक परिणामों और प्रेक्षणों को निरंतर एक समान रूप से दोहराया नहीं जा सकता, तो उन परिणामों को सामान्यतः वैध विज्ञान के रूप में स्वीकार नहीं किया जाता।

फिर भी, ऐसा प्रतीत होता है कि बहुत-सा “ज्ञान” ऐसा है जिसे अनेक लोग “वैज्ञानिक” ज्ञान मान लेते हैं, जबकि वह दोहराए जा सकने वाले प्रेक्षणों या प्रयोगों से प्राप्त नहीं हुआ होता। उदाहरण के लिए, कुछ लोग दावा करते हैं कि पृथ्वी पर जीवन की शुरुआत उस बात से हुई जिसे “स्वतः उत्पत्ति” कहा जाता है। यह वह धारणा है कि पहली जीवित कोशिका (या कोशिकाएँ) समय और संयोग के प्रभाव से बस यूँ ही यादृच्छिक रूप से अस्तित्व में आ गई, जिसमें किसी भी अलौकिक तत्व की कोई भूमिका नहीं थी। क्या ऐसा विश्वास विज्ञान का विषय है, या विश्वास का? इस पुस्तक में जिन विश्वास और विज्ञान की परिभाषाओं के आधार पर हम विचार कर रहे हैं, उनके अनुसार ऐसा विश्वास मुझे विज्ञान की अपेक्षा विश्वास के क्षेत्र में अधिक प्रतीत होता है। मैंने कभी किसी को ऐसी घटना घटित होते हुए नहीं सुना, यहाँ तक कि परोक्ष रूप से भी नहीं। मुझे किसी ऐसे प्रयोग की जानकारी नहीं है जो ऐसी घटना को दोहरा सका हो। अतः, “स्वतः

उत्पत्ति" में विश्वास करना मुझे विज्ञान नहीं, बल्कि विश्वास का विषय प्रतीत होता है।

एक और उदाहरण के रूप में, मानव जाति की उत्पत्ति पर विचार कीजिए। कुछ लोग मानते हैं कि "विज्ञान" यह दिखाता है कि हम लाखों वर्षों में वानरों और उनसे निम्नतर प्राणियों से विकसित हुए हैं। क्या किसी ने कभी सीधे तौर पर ऐसा कुछ होते हुए देखा है? जहाँ तक मुझे ज्ञात है, नहीं। क्या ऐसे कोई पुनरावर्तनीय प्रयोग हैं जो इस विश्वास का समर्थन करते हों? फिर भी, मुझे ऐसे किसी प्रयोग की जानकारी नहीं है। हाँ, मुझे ज्ञात है कि कुछ वैज्ञानिक दावा करते हैं कि कुछ जीवाश्म ऐसे सिद्धांतों का समर्थन करते हैं। मैंने स्वयं कभी कोई जीवाश्म, या यहाँ तक कि जीवाश्मों की ऐसी कोई तस्वीर भी नहीं देखी, जो स्पष्ट रूप से ऐसे निष्कर्ष तक ले जाए। यदि मैं इस प्रकार के महाविकास को मानूँ, तो वह विश्वास का विषय होगा। वह "ऐसी बात में विश्वास" होगा "जिसका प्रत्यक्ष अवलोकन नहीं किया गया है।"

ध्यान दें कि मैं यहाँ यह दावा नहीं कर रहा हूँ कि ऐसे विश्वास गलत हैं (यद्यपि मैं वास्तव में उस दृष्टिकोण की ओर झुक सकता हूँ); मैं यहाँ केवल यह इंगित कर रहा हूँ कि अधिकांश लोगों के लिए ऐसे विश्वास, विज्ञान से अधिक, विश्वास के विषय हैं। कुछ लोगों को ऐसी बातों का प्रत्यक्ष ज्ञान हो सकता है, और उनके लिए यह कहा जा सकता है कि उनका ज्ञान विश्वास पर नहीं, बल्कि विज्ञान पर आधारित है। ऐसी बातों पर विश्वास करने वाले अधिकांश लोगों के बारे में मुझे यह प्रतीत होता है कि उनकी मान्यताएँ विज्ञान की अपेक्षा अधिक विश्वास का विषय हैं।

आगे मनन के लिए:

- ऐसी कौन-सी वैज्ञानिक मान्यताएँ हैं जिन्हें आप अपने स्वयं के प्रयोगों, अवलोकन और तर्क के आधार पर सत्य जानते हैं?
- ऐसी कौन-सी "वैज्ञानिक" मान्यताएँ हैं जिन्हें आप विश्वास के आधार पर स्वीकार करते हैं?
- क्या आपने कभी ऐसे जीवाश्म देखे हैं जो स्पष्ट रूप से इस मान्यता का समर्थन करते हों कि मनुष्य अन्य जीवन-रूपों से उत्पन्न हुए हैं?

अध्याय 20

विज्ञान में विश्वास?

पिछले अध्याय में मैंने यह कहा था कि विज्ञान से जुड़ी बातों के संबंध में लोगों की बहुत-सी मान्यताएँ विज्ञान की अपेक्षा अधिक विश्वास का विषय हैं। मैं इसे कुछ और स्पष्ट करने का प्रयास करूँगा।

लोगों द्वारा “विश्वास” और “विज्ञान” के विषयों को आपस में गड्डु-मड्डु कर देने की समस्या काफी सामान्य प्रतीत होती है, चाहे वे स्वयं को धार्मिक न मानते हों या धार्मिक मानते हों। यह समस्या आंशिक रूप से उस मेल के कारण है जो प्रायः विश्वास और विज्ञान के बीच पाया जाता है। अधिकांश वैज्ञानिकों के पास अपनी विशेषज्ञता के क्षेत्र में “प्रयोगों, अवलोकन और तर्क” के माध्यम से प्रत्यक्ष वैज्ञानिक ज्ञान होता है। हालाँकि, अधिकांश लोगों के पास—और इसमें अधिकांश वैज्ञानिक भी शामिल हैं—वैज्ञानिक ज्ञान के अनेक क्षेत्रों में “प्रयोग, अवलोकन, और तर्क” के माध्यम से प्राप्त प्रत्यक्ष वैज्ञानिक ज्ञान नहीं होता। उनके लिए, ऐसे वैज्ञानिक ज्ञान को स्वीकार करना आंशिक रूप से विश्वास पर आधारित होता है—उन अन्य लोगों पर विश्वास, जो यह दावा करते हैं कि उन्होंने “प्रयोग, अवलोकन, और तर्क” के माध्यम से वैज्ञानिक ज्ञान विकसित किया है।

अतः, विज्ञान और विश्वास के बीच की रेखा काफी धुंधली है, और अलग-अलग लोगों के लिए यह भिन्न होगी। उदाहरण के लिए, ऊर्जा (e), द्रव्यमान (m), और प्रकाश की गति (c) के बीच संबंध व्यक्त करने वाले आइंस्टीन के समीकरण पर विचार कीजिए:

$$e = mc^2$$

कुछ लोग दावा करते हैं कि वे वास्तव में उस समीकरण की व्युत्पत्ति और उसके समर्थन में दिए गए प्रमाण को समझते हैं। मैं उन लोगों में से बिलकुल नहीं हूँ। मैंने कॉलेज में कुछ भौतिकी का अध्ययन अवश्य किया था, लेकिन मेरा प्रमुख विषय भौतिकी नहीं था। फिर भी, मैं मानता हूँ कि $e=mc^2$ मान्य और सत्य है; पर यह इसलिए नहीं कि मैं उसके पीछे की भौतिकी को समझता हूँ। मैंने प्रयोगात्मक परिणामों की समीक्षा करके, या अपने स्वयं के अवलोकन अथवा अपने स्वयं के तर्क के आधार पर, इस समीकरण को सत्य सिद्ध नहीं किया है। मैं मानता हूँ कि यह **विश्वास** के आधार पर सत्य है। मुझे विश्वास है कि आइंस्टीन और जिन लोगों ने उनके कार्य की समीक्षा करके उसे स्वीकार किया, वे जानते थे कि वे क्या कर

रहे थे। मुझे **विश्वास** है कि वैज्ञानिक समुदाय द्वारा $e=mc^2$ की व्यापक स्वीकृति के आधार पर आइंस्टीन सही थे।

दूसरी ओर, मेरा मुख्य अध्ययन-विषय विद्युत अभियांत्रिकी था। विद्युत के सबसे मौलिक समीकरणों में से एक ओम का नियम कहलाता है। यह वोल्टेज (E), धारा (I) और प्रतिरोध (R) के बीच संबंध बताता है:

$$E=I \times R$$

मैं इस संबंध को अपने स्वयं के प्रयोगों, अपने स्वयं के अवलोकनों और तर्क के आधार पर सत्य जानता हूँ। दूसरे शब्दों में: मैं ओम के नियम को विज्ञान के बारे में अपनी व्यक्तिगत समझ के आधार पर सत्य जानता हूँ। जब मैं यह कहता हूँ कि ओम का नियम सत्य है, तो मेरे लिए उसमें **विश्वास** की कोई भूमिका नहीं होती।

अब, विश्वास और विज्ञान के विषय में इस प्रकार बात करने का उद्देश्य, विश्वास और विज्ञान के परस्पर संबंध के बारे में हमारी समझ को स्पष्ट करना है। कुछ लोग दावा करते हैं कि वे केवल विज्ञान पर निर्भर रहते हैं, और यह भी कहते हैं कि वे विश्वास से संबंधित बातों से कोई लेना-देना नहीं रखना चाहते। वे यह नहीं समझते कि विज्ञान पर उनकी निर्भरता का बहुत-सा भाग वास्तव में उनके अपने प्रत्यक्ष अवलोकन, तर्क और समझ के बजाय **विज्ञान में विश्वास** पर आधारित होता है।

आइए, मैं इन विचारों का संक्षेप प्रस्तुत करने का प्रयास करूँ। जिस सीमा तक कोई बात किसी व्यक्ति द्वारा प्रत्यक्ष रूप से देखी या समझी जाती है, उस सीमा तक वह उसके लिए विश्वास नहीं, बल्कि विज्ञान का विषय होती है। जिस सीमा तक किसी बात पर विश्वास किया जाता है, परंतु उसे किसी व्यक्ति ने प्रत्यक्ष रूप से देखा या समझा नहीं है, उस सीमा तक वह केवल विज्ञान नहीं, बल्कि कुछ हद तक विश्वास का विषय भी है। मुझे लगता है कि बहुत-से लोगों को विज्ञान के बारे में जितना ज्ञान है, उससे कहीं अधिक उनका विज्ञान में विश्वास है।

आगे मनन के लिए:

- वैज्ञानिक ज्ञान को आप जितना स्वीकार करते हैं, उसमें कितना भाग आपके अपने “प्रयोगों, अवलोकन और तर्क से प्राप्त” ज्ञान के बजाय विश्वास पर अधिक आधारित है?

अध्याय 21

भ्रम

अध्याय 2 में हमने “सत्य या असत्य” की संकल्पना पर विचार किया था। हमने देखा कि कुछ बातें सत्य होती हैं और कुछ बातें असत्य। इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि हममें से प्रत्येक के लिए किसी ऐसी बात को सत्य मान लेना संभव है जो वास्तव में असत्य हो, या किसी ऐसी बात को असत्य मान लेना जो वास्तव में सत्य हो। यह कहना सामान्य बात है कि जिस व्यक्ति की ऐसी गलत मान्यताएँ हों, वह उन मान्यताओं के विषय में “भ्रमित” है। इसी आधार पर, मैं “भ्रमित” शब्द की एक सरल परिभाषा प्रस्तुत करता हूँ:

भ्रमित: ऐसी अवस्था, जिसमें कोई व्यक्ति किसी बात को सत्य मानता है जबकि वह वास्तव में असत्य होती है, या किसी बात को असत्य मानता है जबकि वह वास्तव में सत्य होती है।

यह स्पष्ट होना चाहिए कि हम सभी कभी-न-कभी कुछ बातों के विषय में भ्रमित हुए हैं। संभव है कि हम यह कहना अधिक पसंद करें कि हमसे “भूल” हुई थी, पर शायद यह ऊपर दी गई “भ्रमित” होने की परिभाषा में ही आता है। हममें से अधिकांश के लिए, जैसे-जैसे हमारी आयु बढ़ती है, वैसे-वैसे हमें अधिकाधिक ऐसी बातों का बोध होता जाता है जिनके विषय में हम भ्रमित रहे हैं। जो लोग यह सोचते हैं कि वे कभी किसी भी बात में भ्रमित नहीं हुए, संभवतः वे ही सबसे अधिक भ्रमित हैं!

हमें ध्यान देना चाहिए कि किसी बात के विषय में भ्रमित हो जाना, उसके बारे में तटस्थ या अनभिज्ञ होने से भिन्न है। यदि किसी बात के बारे में मेरी कोई निश्चित राय या धारणा नहीं है, तो मैं उसके विषय में भ्रमित नहीं हो सकता। मैं या तो उसके संबंध में केवल तटस्थ हूँ, या संभवतः उसके बारे में अनभिज्ञ हूँ (या दोनों का कुछ मिश्रण है)। मैं केवल उन्हीं बातों के विषय में भ्रमित हो सकता हूँ, जिनके बारे में मैं सत्य जानने का दावा करता हूँ। यदि मैं किसी बात के बारे में सत्य जानने का दावा नहीं करता (चाहे खुले रूप से या मन ही मन), तो मैं उसके विषय में भ्रमित नहीं हो सकता। मेरा विचार है कि यही बात आपके लिए भी सत्य है।

अब यह स्पष्ट प्रतीत होता है कि किसी बात के विषय में भ्रमित हो जाना सामान्यतः अच्छा नहीं है। कुछ अपवादों को छोड़कर (मुझे तो कोई भी नहीं सूझता), सामान्यतः किसी भी बात के विषय में भ्रमित होना बुरा है। भ्रमित हो जाना सामान्यतः ऐसे कार्यों की ओर ले जाता है जो सहायक होने के बजाय हानिकारक होते हैं। इसलिए, मैं आशा करता हूँ कि आप पहले से ही यह अपना

लक्ष्य बना चुके हैं कि भ्रमित न हों। यदि ऐसा है, तो इससे एक महत्वपूर्ण प्रश्न उठता है:

हम भ्रमित होने से कैसे बच सकते हैं?

मैं भ्रम से बचने के निम्नलिखित सरल उपाय प्रस्तुत करता हूँ:

पहला: बस इस संभावना के प्रति सचेत रहें कि आप धोखा खा सकते हैं। इससे हमें किसी विषय के बारे में निष्कर्ष तक पहुँचने में अधिक उतावले होने से बचने में सहायता मिलेगी। यदि हम इस संभावना के प्रति सचेत रहें, तो हमारे धोखा खाने की आशंका कम होगी।

दूसरा: जिन बातों के बारे में आपको निश्चित होने लायक पर्याप्त ज्ञान नहीं है, उनके प्रति तटस्थ दृष्टिकोण अपनाइए। मैं दृढ़ता से मानता हूँ कि किसी बात के विषय में धोखा खाने की अपेक्षा उसके प्रति तटस्थ दृष्टिकोण रखना बेहतर है। अनेक बार बातों पर शीघ्र निष्कर्ष बना लेने की कोई आवश्यकता नहीं होती। जब तक आपके पास कोई उचित धारणा बनाने के लिए पर्याप्त जानकारी न हो, तब तक तटस्थ दृष्टिकोण अपनाइए।

तीसरा: जहाँ उचित हो, अपनी अज्ञानता स्वीकार कीजिए। किसी ने कहा है, "अज्ञान ही आनंद है।" मैं सामान्यतः इससे सहमत नहीं हूँ। फिर भी, किसी बात के बारे में अपनी अज्ञानता स्वीकार कर लेना अक्सर इस बात से बेहतर होता है कि हम सभी सही उत्तर जानने का दिखावा करें और अंत में गलत सिद्ध हों। किसी बात के बारे में धोखा खाने का जोखिम उठाने के बजाय, उससे संबंधित अपनी अज्ञानता स्वीकार करने के लिए तैयार रहें।

चौथा: सत्य का खोजी बनिए। सक्रिय रूप से सत्य की खोज करें और अपना जीवन उन बातों के आधार पर निर्मित करें जिन्हें आप सत्य जानते हैं। उन बातों पर निर्भर रहने से बचें जो सत्य न भी हों।

आगे मनन के लिए:

- ऐसी कौन-सी बातें हैं जिनके विषय में आपको धोखा दिया गया है?
- क्या यह संभव है कि इस समय भी किसी बात के विषय में आप भ्रमित किए जा रहे हों?

अध्याय 22

विश्वास और भ्रम

“विश्वास” की उस सरल परिभाषा को याद कीजिए जिसका हम उपयोग कर रहे हैं:

विश्वास: किसी ऐसी बात पर भरोसा, जिसे प्रत्यक्ष रूप से न देखा गया हो।

चूँकि “विश्वास” का संबंध उन बातों से है जिन्हें प्रत्यक्ष रूप से नहीं देखा गया है, इसलिए यह स्वाभाविक है कि विश्वास से जुड़े विषयों में भ्रमित हो जाना अपेक्षाकृत आसान होता है। लोग उन बातों के विषय में बहुत कम भ्रमित होते हैं जिन्हें वे प्रत्यक्ष रूप से देखते हैं। नहीं, हमारे भ्रमित होने की अधिक संभावना उन बातों के विषय में होती है जिन्हें हम प्रत्यक्ष रूप से नहीं देखते—जिनमें वे बातें भी शामिल हैं जिन्हें हम केवल आंशिक रूप से देखते हैं, परोक्ष रूप से देखते हैं, या जिनके बारे में हम केवल दूसरों से सुनते हैं।

उदाहरण के लिए, आपने संभवतः 1938 के “The War of the Worlds” नामक रेडियो नाटक के बारे में सुना होगा। ऐतिहासिक अभिलेखों से संकेत मिलता है कि इसका निर्देशन और कथन Orson Welles ने किया था, और यह 30 अक्टूबर, 1938 को पूरे संयुक्त राज्य अमेरिका में Columbia Broadcasting System पर प्रसारित हुआ था। (उस समय मैं जीवित नहीं था; मैंने इसे स्वयं न तो सुना था और न ही इसका प्रत्यक्ष अवलोकन किया था; मैं यह बात ऐतिहासिक विवरणों के आधार पर कह रहा हूँ, जिनकी शुद्धता पर मेरा कुछ स्तर का विश्वास है।) यह H.G. Wells के एक उपन्यास पर आधारित, अंतरिक्ष से आए प्राणियों के आक्रमण के विषय में एक रेडियो नाटक था। दुर्भाग्यवश, बहुत-से लोगों ने, जो नाटक की भूमिका के बाद उससे जुड़े, यह मान लिया कि परग्रही आक्रमण के बारे में दी जा रही समाचार-रिपोर्टें सच थीं, और वे घबरा उठे तथा गहरी मानसिक व्यथा से ग्रस्त हो गए। बताया जाता है कि कुछ लोगों ने आत्महत्या करने का प्रयास किया। यह मानसिक व्यथा क्यों? आत्महत्या के ये प्रयास क्यों? क्योंकि इन लोगों का रेडियो समाचार-रिपोर्टों की शुद्धता में प्रबल विश्वास था। उन्होंने विश्वास किया कि जो वे सुन रहे थे, वह सत्य था, यद्यपि उन्होंने कथित आक्रमण का कोई प्रत्यक्ष प्रमाण नहीं देखा था। उन्हें धोखा दिया गया था; उन्होंने किसी ऐसी बात को सत्य मान लिया था, जो वास्तव में असत्य थी।

एक और उदाहरण पर विचार कीजिए। बताया जाता है कि Bernard L. Madoff Investment Securities LLC की स्थापना 1960 में स्वयं Bernard L. Madoff

ने की थी। लगभग 48 वर्षों तक इस निवेश फर्म ने लोगों के लिए उनके धन का “निवेश” किया, और सामान्यतः उन निवेशों पर बहुत निरंतर और सुदृढ़ प्रतिफल दिखाए। श्री मैडॉफ ने अपनी कंपनी की लगातार सफलता के आधार पर अत्यधिक धन-संपत्ति और सम्मान अर्जित किया। बहुत से लोगों का इस कंपनी में प्रबल विश्वास था, और उन्होंने अंततः श्री मैडॉफ की निवेश फर्म को \$50,000,000,000 से अधिक सौंपकर अपने विश्वास का प्रमाण दिया (अर्थात् 50 Billion dollars, या 50,000 Million dollars)। शायद आपने सुना होगा: 2008 में यह निवेश कंपनी एक Ponzi scheme चला रही पाई गई थी! भीतर आने वाले नए धन का उचित ढंग से निवेश नहीं किया जाता था। इसके बजाय, उसका उपयोग पहले के निवेशकों को भुगतान करने और श्री मैडॉफ को अत्यंत वैभवपूर्ण जीवनशैली उपलब्ध कराने के लिए किया जाता था। स्पष्टतः, उसके अपने परिवार के कुछ सदस्य भी, जो इस व्यवसाय में कार्यरत थे, इस छल से काफी हद तक अनभिज्ञ थे। बहुत से लोगों का श्री मैडॉफ और उनकी कंपनी पर विश्वास था, लेकिन उन्हें धोखा दिया गया। उन्होंने ऐसी बात पर विश्वास किया जिसे उन्होंने प्रत्यक्ष रूप से नहीं देखा था, और बाद में ही उन्हें पता चला कि उनके साथ छल हुआ था।

अब कुछ अधिक धार्मिक उदाहरण पर विचार कीजिए। टेलीविजन पर प्रचार करने वाले अनेक सफल उपदेशकों (और कुछ कलीसियाओं) का संदेश कुछ इस प्रकार प्रतीत होता है:

“परमेश्वर आपको आर्थिक रूप से आशीष देना चाहता है! हम जो परमेश्वर की सेवा कर रहे हैं, हमें परमेश्वर की और बेहतर सेवा करने के लिए अधिक संसाधनों की आवश्यकता है। हमारी सेवकाई में निवेश कीजिए और परमेश्वर आपको आर्थिक रूप से आशीष देगा! परमेश्वर की आशीष में अब और बाधा मत डालिए; आज ही दीजिए!”

क्या ऐसे दावे सत्य हैं? ऐसे दावों को मानने में सामान्यतः विश्वास शामिल होता है, लेकिन किसी बात के बारे में विश्वास रखने से वह सत्य नहीं हो जाती। इसी प्रकार, किसी बात के बारे में विश्वास न रखने से वह असत्य नहीं हो जाती।

आगे मनन के लिए:

- क्या इस समय आपका किसी ऐसी बात पर विश्वास है, जो अंततः एक छल सिद्ध हो सकती है?

अध्याय 23

विज्ञान और भ्रम

“science” की उस सरल परिभाषा को स्मरण कीजिए, जिसका हम उपयोग कर रहे हैं:

विज्ञान: प्राकृतिक दुनिया और ब्रह्मांड के विषय में वह ज्ञान, जो प्रयोगों, अवलोकन और तर्क के आधार पर प्राप्त होता है।

चूँकि “science” उस ज्ञान से संबंधित है जो “derived from experiments, observation, and reason” है, कोई यह सोच सकता है कि “science” के विषयों में धोखा खा जाना अपेक्षाकृत कठिन है। हालाँकि, हमने पहले अध्याय 19 और 20 में देखा था कि बहुत-से लोगों का विश्वास, वास्तविक वैज्ञानिक ज्ञान की अपेक्षा, “science” पर अधिक आधारित है। चूँकि “science” के संबंध में जिन बातों पर हम विश्वास करते हैं, उनमें से बहुत-सी वास्तव में वैज्ञानिकों की कही बातों पर हमारे विश्वास पर आधारित होती हैं (न कि हमारे अपने प्रत्यक्ष अवलोकन और समझ पर), इसलिए मेरी राय में छल की संभावना काफी बड़ी है।

उदाहरण के लिए, क्या आपने उस प्रौद्योगिकी start-up company के बारे में सुना, जिसका मुख्य उत्पाद एक वैज्ञानिक breakthrough पर आधारित था? निवेशकों ने कंपनी में धन लगा दिया, क्योंकि उन्हें विश्वास था कि उनके नियोजित उत्पाद के पीछे का “science” ठोस था। इसके विपरीत, निवेशकों से धन प्राप्त करने के लिए कंपनी की व्यावसायिक योजना ही वास्तव में ठोस थी! निवेशकों ने माना कि विज्ञान सही था, पर स्पष्टतः ऐसा नहीं था। धोखाधड़ी के आरोप लगे; मुकदमे चले। मैं यहाँ जानबूझकर किसी का नाम नहीं ले रहा हूँ; वर्णित स्थिति केवल एक ही कंपनी तक सीमित नहीं है।

एक और उदाहरण पर विचार कीजिए। कई वर्ष पहले यह एक प्रचलित वैज्ञानिक धारणा थी (सरल प्रयोगों, अवलोकन और तर्क के आधार पर) कि अनेक जीवन-रूप, विशेषकर छोटे कीट, जैविक पदार्थ में स्वतः उत्पन्न हो जाते हैं (जैसे सड़ते भोजन या मल में)। लगभग 1864 के आसपास लुई पाश्चर ने स्पष्ट रूप से दिखा दिया कि जीवन की स्वतः उत्पत्ति नहीं होती। उन्होंने दिखाया कि सभी जीवन-रूप प्राकृतिक प्रजनन प्रक्रियाओं के माध्यम से अपने ही समान जीवन-रूपों से आते हैं। अब जबकि अधिक विकसित विज्ञान उपलब्ध है, यह व्यापक रूप से स्वीकार किया जाता है कि जीवन-रूप, जैसा हम उन्हें जानते हैं, बस स्वतः उत्पन्न नहीं हो

जाते। यह उस पूर्व “वैज्ञानिक” धारणा का एक स्पष्ट उदाहरण है, जिसे बेहतर विज्ञान के आधार पर असत्य सिद्ध किया गया। दिखावा भ्रामक हो सकता है!

चिकित्सा-विज्ञान पर विचार कीजिए। आपने ऐसी कितनी दवाओं के बारे में सुना है, जिन्हें कभी किसी विशेष स्वास्थ्य-समस्या के लिए अच्छा उपचार बताकर प्रचारित किया गया था, लेकिन बाद में पता चला कि उनके हानिकारक प्रभाव उनके लाभों से भी अधिक गंभीर थे? बहुत-से लोगों ने उन दवाओं को यह मानकर लिया कि चिकित्सा-विज्ञान ने उन्हें सुरक्षित ठहराया है। वे मानते थे कि वे दवाएँ सुरक्षित हैं, जबकि वास्तव में वे सुरक्षित नहीं थीं। उन्होंने किसी ऐसी बात को सत्य माना जो वास्तव में असत्य थी। वे भ्रमित थे।

ध्यान दीजिए कि हम “भ्रमित” की जो परिभाषा प्रयोग कर रहे हैं, उसमें यह नहीं देखा जाता कि कोई जान-बूझकर भ्रमित करने वाला शामिल था या नहीं। भ्रमित होना केवल “किसी ऐसी बात को सत्य मानने की अवस्था है जो वास्तव में असत्य हो, या किसी ऐसी बात को असत्य मानने की अवस्था है जो वास्तव में सत्य हो।” पिछले दो उदाहरणों में ऐसा प्रतीत नहीं होता कि कोई जान-बूझकर किसी और को भ्रमित कर रहा था। तथापि, पहले उदाहरण (the start-up company) में ऐसा प्रतीत होता है कि किसी के द्वारा जान-बूझकर भ्रमित करने की संभावना अधिक है। इस प्रकार, जानबूझकर किए गए धोखे के अभाव में भी हम बातों के विषय में भ्रमित हो सकते हैं।

उपरोक्त प्रत्येक उदाहरण में विद्यमान एक समान सूत्र पर विचार कीजिए। प्रत्येक मामले में लोगों ने किसी ऐसी बात पर विश्वास किया, जिसके बारे में उन्हें वास्तव में बहुत कम या बिल्कुल भी प्रत्यक्ष ज्ञान नहीं था। उन्होंने या तो अपनी सीमित समझ पर, या दूसरों के सीमित वैज्ञानिक ज्ञान पर विश्वास किया। इस प्रकार, हम देखते हैं कि “वैज्ञानिक” ज्ञान के विषय में भी हम भ्रमित हो सकते हैं, जब वह ज्ञान या तो अपूर्ण हो, या केवल विश्वास के आधार पर स्वीकार कर लिया गया हो।

आगे मनन के लिए:

- क्या आप कभी किसी ऐसी बात के विषय में भ्रमित हुए हैं, जिसे आप ठोस विज्ञान पर आधारित मानते थे?

अध्याय 24

विश्वास और विज्ञान का संघर्ष

आइए, अध्याय 18 और 19 से “विश्वास” और “विज्ञान” की उन सरल परिभाषाओं की फिर से संक्षेप में समीक्षा करें, जिनका हम उपयोग करते रहे हैं:

विश्वास: किसी ऐसी बात पर भरोसा, जिसे प्रत्यक्ष रूप से न देखा गया हो।

विज्ञान: प्राकृतिक दुनिया और ब्रह्मांड के विषय में वह ज्ञान, जो प्रयोगों, अवलोकन और तर्क के आधार पर प्राप्त होता है।

चूँकि विश्वास सामान्यतः उन बातों पर भरोसा करने से संबंधित होता है जिन्हें प्रत्यक्ष रूप से नहीं देखा जाता, और विज्ञान सामान्यतः उन बातों के ज्ञान से संबंधित होता है जिन्हें देखा-परखा जा सकता है, इसलिए दोनों के बीच आवश्यक रूप से कोई संघर्ष होना जरूरी नहीं है। तो फिर, विश्वास और विज्ञान के बीच प्रायः संघर्ष क्यों दिखाई देता है?

हमें यह समझना चाहिए कि विश्वास और विज्ञान के बीच संघर्ष दो मूलभूत प्रकारों से उत्पन्न हो सकता है:

- अलग-अलग लोगों के बीच के संघर्ष (या लोगों के विभिन्न समूहों के बीच), जो उनके विश्वास और वैज्ञानिक ज्ञान में भिन्नताओं के कारण उत्पन्न होते हैं।
- किसी व्यक्ति के भीतर के संघर्ष, जो उसके अपने विश्वास और वैज्ञानिक ज्ञान को लेकर होते हैं।

यदि हमें अलग-अलग लोगों के बीच विश्वास और विज्ञान के संघर्षों को सुलझाने की कोई आशा रखनी है, तो पहले हमें अपने भीतर ऐसे संघर्षों को समझने और सुलझाने में सक्षम होना चाहिए। इसलिए, आइए व्यक्तिगत स्तर पर होने वाले संघर्षों पर ध्यान केंद्रित करें।

बहुत से लोग बस यह मान लेते हैं कि विश्वास और विज्ञान के बीच के संघर्ष सुलझ नहीं सकते, इसलिए वे दोनों में सामंजस्य स्थापित करने का प्रयास ही नहीं करते, यहाँ तक कि अपनी स्वयं की समझ के भीतर भी नहीं। तथापि, मेरा विश्वास है कि “अविरोध का नियम” मान्य है। यह नियम, जो प्राचीन काल से कई दार्शनिक परंपराओं के माध्यम से विकसित हुआ है, मूलतः यह कहता है:

- यदि दो कथन (या विचार या मान्यताएँ) एक-दूसरे का विरोध करते हैं, तो वे दोनों एक ही समय में और एक ही अर्थ में सत्य नहीं हो सकते।

मैं विश्वास करता हूँ कि अविरोध का नियम विज्ञान के सभी विषयों (वे बातें जिन्हें हम निरंतर रूप से देख सकते हैं) और विश्वास के सभी विषयों (वे बातें जिन्हें प्रत्यक्ष रूप से नहीं देखा जाता) में सत्य है। मैं विश्वास करता हूँ कि सच्चा विज्ञान, उन बातों के संबंध में जो सत्य हैं, विश्वास का विरोध नहीं करता। इसलिए, अविरोध के नियम के आधार पर, मैं निम्नलिखित बातों को सत्य मानता हूँ:

- यदि हमारा विश्वास केवल उन्हीं बातों में हो जो वास्तव में सत्य हैं (यद्यपि हम उनके सत्य को वैज्ञानिक रीति से सिद्ध नहीं कर सकते), और यदि हमारा वैज्ञानिक ज्ञान केवल उसी विज्ञान पर आधारित हो जो वास्तव में सत्य है (और विज्ञान से जुड़ी विभिन्न प्रकार की भ्रांतियों से प्रभावित न हो), तो विश्वास के विषयों और विज्ञान के विषयों के बीच कोई विरोध नहीं होगा।

हमारे विश्वासों में विरोधाभास इस बात का संकेत देता है कि हम किसी ऐसी बात पर विश्वास कर रहे हैं जो असत्य है। जब इसे हमारे अपने जीवन पर लागू किया जाता है, तो यह हमें मिथ्या मान्यताओं की पहचान करने और उनसे मुक्त होने में सहायता करने का एक साधन बनता है। यदि हमारे विश्वासों में कोई विरोधाभास है, तो उस विरोध को दूर करने के लिए हमें या तो अपने विश्वास-संबंधी मान्यताओं को, या अपने वैज्ञानिक ज्ञान को समायोजित करना चाहिए।

अब आइए संक्षेप में देखें कि विभिन्न व्यक्तियों या लोगों के विभिन्न समूहों के बीच विश्वास और विज्ञान को लेकर किस प्रकार के टकराव होते हैं। यह समझना कठिन नहीं होना चाहिए कि इनमें से बहुत-से टकराव इसलिए उत्पन्न होते हैं क्योंकि एक पक्ष या दोनों पक्ष ऐसी बातों पर विश्वास करते हैं जो सत्य नहीं हैं, चाहे वे "वैज्ञानिक" बातें हों या विश्वास से जुड़े विषय। चूँकि अधिकांश लोग अपनी मान्यताओं में परिवर्तन स्वीकार करने में धीमे होते हैं, इसलिए टकराव का समाधान प्रायः धीमी और कठिन प्रक्रिया होती है।

आगे मनन के लिए:

- क्या आप मानते हैं कि अविरोध का नियम सत्य है? क्यों, या क्यों नहीं?
- क्या आपके वैज्ञानिक ज्ञान और विश्वास-सम्बन्धी मान्यताओं के बीच कुछ विरोधाभास हैं? यदि हाँ, तो आपके ज्ञान या मान्यताओं में कौन-से परिवर्तन उन विरोधाभासों का समाधान कर सकते हैं?

भाग 3

परमेश्वर प्रकट हुआ

क्या किसी कलाकार की कला से उसके बारे में कुछ जाना जा सकता है? क्या किसी वास्तुकार के बारे में उन भवनों से कुछ जाना जा सकता है जिन्हें वह रचता है? निस्संदेह। जिन बातों का हम सृजन करते हैं, वे इस बात का प्रतिबिंब होती हैं कि हम कौन हैं।

भाग 1 में इस निष्कर्ष पर पहुँचने के बाद कि एक ही परमेश्वर है जिसने सब कुछ रचा, अब हम आगे बढ़ सकते हैं: जो कुछ रचा गया है, उसे देखकर हम परमेश्वर के बारे में जान सकते हैं। हम इस विषय को इस दृष्टि से समझेंगे कि परमेश्वर कई क्षेत्रों में कैसे प्रकट होता है:

- प्रकृति में प्रकट परमेश्वर
- स्व में प्रकट परमेश्वर
- दूसरों में प्रकट परमेश्वर
- संबंधों में प्रकट परमेश्वर
- दूसरों के माध्यम से प्रकट परमेश्वर
- धर्मग्रंथ के माध्यम से प्रकट परमेश्वर
- क्या यीशु के माध्यम से परमेश्वर प्रकट हुआ?

अध्याय 25

प्रकृति में प्रकट परमेश्वर

सुंदर सूर्यास्त, समुद्र की टकराती लहरें, जीवन और मृत्यु के चक्र, भूकंप, तूफान, रोग; ऐसी बातों से हम परमेश्वर के बारे में क्या सीख सकते हैं?

पहले, परमेश्वर की महानता पर विचार करें। ब्रह्मांड की विशालता ऐसे परमेश्वर को प्रकट करती है जिसकी सामर्थ्य हमारी समझ से परे है। जीवन की जटिलता, और सामान्य रूप से समूची प्रकृति की जटिलता, ऐसे परमेश्वर को प्रकट करती है जिसकी समझ और सृजनशील सामर्थ्य हमारी अपनी समझ और क्षमता से कहीं बढ़कर है। वास्तव में, कुछ लोग परमेश्वर में विश्वास को केवल इसलिए अस्वीकार कर देते हैं क्योंकि वे ऐसे परमेश्वर की कल्पना ही नहीं कर पाते जिसकी सामर्थ्य और सृजनशीलता इतनी अगम्य हो। शायद अधिक बुद्धिमानी इसी में है कि हम इस विषय में अपनी सीमाओं को स्वीकार करें, बजाय इसके कि परमेश्वर को उसी सीमा में बाँधने का प्रयास करें जिसे हम पूरी तरह समझ सकें।

इतिहास भर लोग इस प्रश्न से जूझते रहे हैं कि परमेश्वर कितना महान है। इतालवी खगोलशास्त्री जिओर्दानो ब्रूनो उन आरंभिक व्यक्तियों में थे जिन्होंने अनंत ब्रह्मांड की अपनी समझ के आधार पर अनंत सामर्थ्य वाले परमेश्वर का विचार प्रस्तुत किया। दुर्भाग्यवश, उनके समय में बहुत कम लोग ब्रह्मांड की विशालता को उस प्रकार समझ पाते थे, जिस प्रकार आज विज्ञान उसे समझता है, और श्री ब्रूनो के समय के अधिकांश धार्मिक नेता ब्रह्मांड के पृथ्वी-केंद्रित स्वरूप पर ही जोर देते थे। श्री ब्रूनो की अनेक अन्य मान्यताएँ भी थीं, जो उनके समय के धार्मिक नेताओं की शिक्षाओं के विपरीत थीं। अंततः उनके अपरंपरागत विचार पारंपरिक मान्यताओं से अत्यधिक टकराते हुए माने गए, और इतिहास बताता है कि अपनी मान्यताओं के संबंध में एक लंबे मुकदमे के बाद 17 फ़रवरी, 1600 AD को रोम में श्री ब्रूनो को मृत्युदंड दिया गया।

उनकी मृत्यु के बाद से वैज्ञानिक ज्ञान में हुई अत्यधिक प्रगति के कारण, ब्रह्मांड की विशालता के बारे में जिओर्दानो ब्रूनो की समझ अब व्यापक रूप से स्वीकार की जाती है। मैं यह भी मानता हूँ कि परमेश्वर की महानता के विषय में भी श्री ब्रूनो सही थे। यह हमें परमेश्वर के बारे में एक महत्वपूर्ण सत्य तक ले आता है:

परमेश्वर हमारी समझ से कहीं अधिक महान हैं।

दूसरे, प्रकृति में दिखाई देने वाले तीव्र विरोधों पर विचार कीजिए। ऐसा प्रतीत होता है कि बहुत-सी सुंदरता और आनंद के साथ-साथ बहुत-सी कुरूपता और पीड़ा भी

मौजूद है। और शायद बात यही है: प्रकृति का बहुत बड़ा हिस्सा विरोधों पर आधारित है। हम सुंदरता का मूल्य तभी समझ सकते हैं, जब उसकी तुलना किसी कुरूप वस्तु से की जाए। अच्छे स्वास्थ्य का महत्व तभी समझ में आता है, जब उसका अंतर खराब स्वास्थ्य से स्पष्ट हो। शांति का मूल्य भी उतना ही समझा जाता है, जितना वह संघर्ष के विपरीत दिखाई देती है। स्वच्छता का मूल्य भी तभी जाना जाता है, जब उसका अंतर गंदगी से किया जाए। इसलिए, प्रकृति में पाए जाने वाले इन अनेक विरोधों से मैं यह निष्कर्ष निकालता हूँ कि भेद करना परमेश्वर के स्वभाव का एक अंग है—सुंदरता और कुरूपता के बीच, अच्छे और बुरे के बीच; स्वस्थ और रोगी के बीच; बलवान और दुर्बल के बीच; ऐसी बातों के बीच भेद करना, प्रतीत होता है, परमेश्वर का चरित्र का एक भाग है।

कुछ लोग यह सुझाव दे सकते हैं कि परमेश्वर ऐसी बातों के प्रति उदासीन है, क्योंकि प्रकृति में इन विरोधों के दोनों पक्ष उपस्थित हैं। इसके विपरीत, मुझे तो यह दिखाई देता है कि ऐसे विरोधों का अस्तित्व ही इस बात का संकेत है कि परमेश्वर इन बातों की परवाह करता है। और जैसे हम मनुष्य स्वाभाविक रूप से “अच्छी” बातों का अनुसरण करते हैं और “बुरी” बातों को ठुकराते हैं, वैसे ही मुझे यह स्पष्ट लगता है कि परमेश्वर भी “बुरी” बातों की अपेक्षा “अच्छी” बातों को अधिक पसंद करता है। आइए, इस विचार का सार इस प्रकार समझें:

परमेश्वर अच्छी बातों और बुरी बातों के बीच भेद करता है।

यह एक महत्वपूर्ण प्रश्न उठाता है: मुझे लगता है कि हमारे लिए यही बुद्धिमानी होगी कि हम उन बातों को महत्व दें जिन्हें परमेश्वर महत्व देता है, और उन बातों को अस्वीकार करें जिन्हें परमेश्वर अस्वीकार करता है।

आगे मनन के लिए:

- क्या आप प्रकृति के ऐसे अन्य पहलुओं के बारे में सोच सकते हैं जो परमेश्वर के विषय में कुछ प्रकट करते हों?

अध्याय 26

स्व में प्रकट परमेश्वर

हम मनुष्य, तर्कसंगत रूप से, परमेश्वर की भौतिक सृष्टि में सबसे अधिक परिष्कृत और सबसे अधिक विकसित प्राणी हैं—कम-से-कम जितना हमें प्रत्यक्ष रूप से ज्ञात है। इसलिए, यह संभव प्रतीत होता है कि परमेश्वर के अनेक पहलू इस बात में प्रतिबिंबित होते हैं कि उसने हममें से प्रत्येक को कैसे बनाया है। आइए, कुछ ऐसे तरीकों पर विचार करें जिनमें परमेश्वर का चरित्र हमारे बनाए जाने में प्रतिबिंबित होता दिखाई देता है।

क्या आप कभी किसी कलाकृति की सुंदरता, किसी सुंदर सूर्यास्त, या किसी सुंदर जलप्रपात को देखकर गहराई से प्रभावित हुए हैं? क्या आप कभी इस बात को लेकर चिंतित हुए हैं कि आपने जो कुछ बनाया है, लोग उसकी सराहना करेंगे या नहीं? सुंदर वस्तुओं के प्रति आपकी सराहना और लगाव कहाँ से आता है? मैं पाता हूँ कि सौंदर्य के प्रति सराहना का भाव मेरे बनाए जाने का ही एक हिस्सा है, कोई ऐसी बात नहीं जो मुझे सिखानी पड़ी हो (यद्यपि शिक्षा इस बात को प्रभावित कर सकती है कि मैं सौंदर्य को कितना महत्व देता हूँ)। चूँकि परमेश्वर अंततः हम सबका सृष्टिकर्ता है, और हममें से प्रत्येक में सौंदर्य के प्रति एक सहज सराहना दिखाई देती है, इसलिए मैं यह निष्कर्ष निकालता हूँ कि:

***परमेश्वर सौंदर्य की सराहना करता है,
और सुंदर वस्तुएँ बनाने में आनंद लेता है।***

यह भी विचार कीजिए कि स्वाभाविक रूप से, जब हममें से कोई कुछ बनाता है, तो हम चाहते हैं कि उसमें हमारे बारे में कोई अच्छी बात झलके। यदि हम भोजन पकाते हैं, तो सामान्यतः हम चाहते हैं कि वह अच्छा दिखे और अच्छा लगे, ताकि दूसरों पर हमारा अच्छा प्रभाव पड़े। यदि हम कला रचते हैं, तो हम चाहते हैं कि वह हमारे बारे में कुछ अच्छा व्यक्त करे। यदि हम एक घर बनाते हैं, तो हम चाहते हैं कि अंतिम परिणाम “अच्छा” हो, ताकि दूसरों को उससे लाभ मिले और वे हमारे काम की सराहना करें। मैं मानता हूँ कि यह भी परमेश्वर का ही एक प्रतिबिंब है:

***परमेश्वर अच्छी वस्तुएँ बनाने को महत्व देता है, और जब हम
उसकी बनाई अच्छी वस्तुओं की सराहना करते हैं, तो उसे
प्रसन्नता होती है।***

अब किसी ऐसी वस्तु पर विचार कीजिए, जिसे आपने बनाया हो और जिसे किसी दूसरे व्यक्ति ने या तो लापरवाही से क्षति पहुँचाई हो, या उसके बारे में बुरा कहा हो। क्या आपको यह बात खली कि किसी ने आपकी बनाई हुई वस्तु के प्रति ऐसा अनादर दिखाया? मैं जानता हूँ कि मेरे लिए इसका उत्तर स्पष्ट रूप से “हाँ, जब उन्होंने ऐसा किया, तो मुझे बुरा लगा” है। क्या आपको लगता है कि जब हम परमेश्वर की बनाई हुई वस्तुओं का दुरुपयोग करते हैं, या उनके बारे में बुरा बोलते हैं, तो परमेश्वर उदासीन रहता है? मुझे ऐसा नहीं लगता। मुझे लगता है कि हम निश्चयपूर्वक यह कह सकते हैं:

परमेश्वर को अपनी सृष्टि की परवाह है।

आगे इस पर भी विचार कीजिए: क्या कभी किसी ने आपके साथ गलत किया है, और आप उससे क्रोधित हुए हैं? ऐसी दृढ़ मान्यताएँ और भावनाएँ कहाँ से आती हैं? कुछ बातों पर आपको क्रोध क्यों आता है? यह भी प्रतीत होता है कि यह हमारे बनाए जाने की रीति का एक भाग है। एक बार फिर, मैं इसे परमेश्वर के चरित्र का प्रतिबिंब मानता हूँ:

परमेश्वर के पास इस बारे में दृढ़ मान्यताएँ हैं कि क्या सही है और क्या गलत।

जब गलत बातें होती हैं, तो परमेश्वर भावनात्मक प्रतिक्रिया देता है।

कुछ लोग सोचते हैं कि परमेश्वर हमारे प्रति उदासीन है और बहुत दूर है। इसके विपरीत, मैं पाता हूँ कि हमारी अपनी भावनाएँ, हमारी अपनी पसंद और हमारी अपनी नापसंद यह दिखाती हैं कि परमेश्वर दूर, बेपरवाह और उदासीन नहीं है। बल्कि, वह निकट है, वह प्रेमपूर्ण है, और वह धर्मी है।

आगे मनन के लिए:

- आपकी अपनी मनुष्यता के और कौन-से पहलू हो सकते हैं, जो परमेश्वर के चरित्र का प्रतिबिंब हों?

अध्याय 27

दूसरों में प्रकट परमेश्वर

हमने अध्याय 25 में प्रकृति में पाए जाने वाले अनेक भेदों और विरोधों को देखा, जो परमेश्वर के चरित्र को समझने में हमारी सहायता करते हैं।

परमेश्वर की सृष्टि में एक और भेद पर विचार कीजिए: पुरुष और स्त्रियाँ, लड़के और लड़कियाँ, पुरुष और महिला। पुरुष सामान्यतः “पुरुषोचित” गुणों से जुड़े होते हैं, जबकि स्त्रियाँ सामान्यतः “स्त्रियोचित” गुणों से जुड़ी होती हैं। यदि पुरुष और स्त्री दोनों की सृष्टि न की गई होती, तो संभवतः हमें उन भेदों और प्रत्येक की अपनी-अपनी सामर्थ्य की बहुत कम समझ होती। विचार कीजिए कि हमारी लैंगिकता का हमारे जीवन पर कितना गहरा प्रभाव पड़ता है। मेरा मानना है कि परमेश्वर के पास हमें इस प्रकार बनाने का कोई अच्छा कारण अवश्य रहा होगा। मेरा मानना है कि यह परमेश्वर के चरित्र के बारे में कुछ बताता है।

अब, पुरुषों और स्त्रियों के बीच के भेदों पर चर्चा करना कुछ वैसा है जैसे किसी ऐसे खेत में चलना, जिसमें भूमि-सुरंगें दबी हों। आप चाहे कितनी ही सावधानी से चलें, फिर भी किसी भूमि-सुरंग के फट पड़ने और आपको घायल कर देने की संभावना बनी रहती है। इसलिए, सामान्यतः उस दिशा में न जाना ही बेहतर होता है। तो, फिलहाल, आइए सामान्य बातों पर ही चर्चा करें।

आपके विचार में पुरुषों और महिलाओं के बीच कुछ अंतर क्या हैं? प्रत्येक लिंग की सबसे अच्छी विशेषताएँ और शक्तियाँ क्या हैं? क्या ऐसा हो सकता है कि, कुछ अर्थों में, परमेश्वर में प्रत्येक लिंग की सबसे अच्छी विशेषताएँ हों, पर उनकी कमजोरियाँ और त्रुटियाँ न हों? मुझे ऐसा सोचना अच्छा लगता है। मुझे लगता है कि आंशिक रूप से इसी कारण परमेश्वर ने नर और नारी की रचना की, ताकि हम अपने अनेक भेदों को समझते हुए उसके चरित्र को और अच्छी तरह समझ सकें।

आइए, इसे थोड़ा और आगे बढ़ाएँ। विचार कीजिए कि पृथ्वी पर लगभग हर व्यक्ति के बीच कितनी व्यापक विविधता है। हम सब अनेक बातों में एक-दूसरे से बहुत भिन्न हैं। कुछ ऐसे लोगों के बारे में सोचिए, जिनका आप सम्मान करते हैं या जिनकी आप प्रशंसा करते हैं। आप उनका सम्मान या प्रशंसा क्यों करते हैं? क्या ऐसा हो सकता है कि जिन विशेषताओं का आप सम्मान करते हैं और जिनकी आप प्रशंसा करते हैं, वे परमेश्वर की भी विशेषताएँ हों? मुझे लगता है कि संभवतः ऐसा ही है। आइए, इस विचार का सार इस प्रकार समझें:

कई प्रकार से, परमेश्वर का चरित्र उन श्रेष्ठ बातों से प्रकट होता है जिन्हें हम अन्य लोगों में देखते हैं।

इसे और स्पष्ट करने के लिए, चरित्र-गुणों के कुछ विपरीत रूपों पर विचार कीजिए, जो हमें विभिन्न लोगों में दिखाई देते हैं। निम्नलिखित में से कौन-से गुण आपको लगता है कि परमेश्वर का सबसे अच्छी तरह वर्णन करते हैं?

साहसी / कायर
स्वार्थी / उदार
बलवान / दुर्बल
अयोग्य / कुशल
धर्मी / अधर्मी
करुणाशील / उदासीन
सुंदर / कुरूप
अस्थिर / चट्टान-सा दृढ़
विश्वसनीय / अविश्वसनीय
आहत करने वाला / सांत्वना देने वाला
सहायक / विनाशकारी

हाँ, हम दूसरों में जो श्रेष्ठ है उसे देखकर परमेश्वर के बारे में बहुत कुछ सीख सकते हैं।

आगे मनन के लिए:

- और कौन-से चरित्र-गुण हैं जिन्हें आप दूसरों में मूल्यवान मानते हैं? क्या ये वही गुण हैं जो संभवतः परमेश्वर के चरित्र का भी भाग हैं?

अध्याय 28

संबंधों में प्रकट परमेश्वर

क्या आपने कभी और अधिक गहरे संबंधों की लालसा की है? जब मैं युवा था, तो अनेक संबंधों से मुझे गहरी ठेस पहुँची थी, और कभी-कभी मैं लोगों और कटु संबंधों से दूर भागने के लिए संन्यासी बन जाने का स्वप्न देखता था। परंतु वास्तव में मैं यही नहीं चाहता था। वास्तव में मैं जो चाहता था, और जिसकी मुझे आवश्यकता थी, वह था दूसरे लोगों के साथ अच्छे संबंध। मेरी अभिलाषा है कि दूसरे मुझे जानें, मुझे स्वीकार करें और मुझसे प्रेम करें। ऐसी अभिलाषा कहाँ से आती है? मैं फिर इसी निष्कर्ष पर पहुँचता हूँ कि यह परमेश्वर के उस स्वभाव का एक अंश है, जो हममें परिलक्षित होता है:

परमेश्वर गहरे संबंधों को महत्त्व देते हैं।

जीवन के सबसे सरल रूपों में भी प्रजनन के लिए किसी न किसी प्रकार के भौतिक संबंध की आवश्यकता होती है। जब हम जीवन के अधिक जटिल रूपों पर विचार करते हैं, तो व्यक्तियों के बीच संबंध क्रमशः अधिक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाने लगते हैं। जीवन का रूप जितना उच्च होता है, संबंध उतने ही अधिक महत्त्वपूर्ण प्रतीत होते हैं।

प्राकृतिक जीवन के उस उच्चतम रूप पर विचार कीजिए, जिसके बारे में हमें ज्ञान है: मनुष्य। यह स्पष्ट है कि संबंध हमारे जीवन का एक अत्यंत महत्त्वपूर्ण भाग हैं। इससे मुझे यह विश्वास होता है कि परमेश्वर के लिए भी—जो संभवतः जीवन का सर्वोच्च रूप हैं—संबंध अत्यंत महत्त्वपूर्ण हैं। परमेश्वर संबंधों को महत्त्व देता है; गहरे संबंधों को। वह, जैसा कि कुछ लोगों ने कल्पना की है, दूर और उदासीन नहीं है। इसके विपरीत, सृष्टि में उसके उद्देश्य का एक भाग संबंध ही प्रतीत होता है। मैं यह निष्कर्ष निकालता हूँ कि:

परमेश्वर हमारे साथ संबंध चाहता है!

आइए, संबंधों के कुछ विशिष्ट रूपों पर विचार करें। पहले माता-पिता और उनकी संतान पर दृष्टि डालें। परमेश्वर ने हमारे जन्म के समय हमें इतना असहाय क्यों बनाया? परमेश्वर ने हमें इतने वर्षों तक अपने माता-पिता पर इतना निर्भर क्यों बनाया? इससे मैं समझता हूँ कि परमेश्वर निकट और परस्पर-निर्भर संबंधों को महत्त्व देता है। परमेश्वर का अभिप्राय यह नहीं है कि हम अकेले रहें और दूसरों से स्वतंत्र होकर जीवन बिताएँ। इसके अतिरिक्त, यह मानना उचित लगता है कि माता-पिता और संतान के संबंध में उस संबंध की कुछ झलक मिलती है, जो

परमेश्वर हमारे साथ रखना चाहता है (जहाँ परमेश्वर हमारा पालनकर्ता और देखभाल करने वाला है, और हम उसकी संतान हैं)।

अपने बच्चों के प्रति माता-पिता के प्रेम और समर्पण पर विचार कीजिए। यह कहाँ से आता है? फिर से, ऐसा प्रतीत होता है कि इसका स्रोत इस बात में है कि परमेश्वर ने हमें कैसे बनाया है। संभव है कि परमेश्वर ने हमें अपनी संतान के प्रति स्वाभाविक प्रेम इसलिए दिया हो, ताकि हम अपने प्रति उसके प्रेम को अधिक अच्छी तरह समझ सकें।

एक और महत्वपूर्ण मानवीय संबंध पर विचार कीजिए: एक पुरुष और एक स्त्री के बीच का प्रणय-प्रेम। प्रणय-प्रेम कहाँ से आता है? हम एक प्रणयपूर्ण और शारीरिक रूप से घनिष्ठ संबंध की इच्छा क्यों करते हैं? फिर, ऐसा प्रतीत होता है कि यह भी इस बात का हिस्सा है कि परमेश्वर ने हमें कैसे बनाया है। परमेश्वर ने हमें इस प्रकार क्यों बनाया? स्पष्टतः इसलिए कि गहरे और घनिष्ठ संबंध परमेश्वर के लिए बहुत महत्वपूर्ण हैं।

इस चर्चा के आधार पर, मैं यह निष्कर्ष निकालता हूँ:

लोगों के लिए परमेश्वर का प्रेम, बच्चों के प्रति माता-पिता के प्रेम के समान है, और प्रणय-प्रेम की तरह उत्कट भी है।

आगे मनन के लिए:

- क्या मानवीय संबंधों के और भी ऐसे पहलू हैं जो, आपके विचार में, परमेश्वर के बारे में कुछ प्रकट करते हैं?

दूसरों के माध्यम से प्रकट परमेश्वर

हमने देखा है कि परमेश्वर गहरे संबंधों को महत्व देता है। चूँकि परमेश्वर का स्वभाव संबंधों पर केंद्रित प्रतीत होता है, इसलिए यह अपेक्षित है कि युगों से लोगों ने परमेश्वर के साथ संबंध का अनुभव किया है। मैं यह निष्कर्ष निकालता हूँ:

हमें उन लोगों से सीखना चाहिए जिन्होंने परमेश्वर के साथ संबंध का अनुभव किया है।

इससे एक महत्वपूर्ण प्रश्न उठता है: हम कैसे पहचानें कि किसी व्यक्ति का परमेश्वर के साथ वास्तविक सामना हुआ है, या यह केवल किसी प्रकार का भ्रम या गलतफहमी है? यहाँ कुछ दिशानिर्देश हैं, जो मुझे उपयोगी लगे हैं:

- **अनेक भिन्न लोगों के बीच संगति खोजें।** परमेश्वर के विषय में सत्य किसी एक व्यक्ति की गवाही पर निर्भर नहीं होना चाहिए। जो कोई भी सचमुच एकमात्र सच्चे परमेश्वर का अनुभव करता है, उसके अनुभव और साझा किए गए सत्य परस्पर मिलते-जुलते होने चाहिए, विरोधाभासी नहीं।
- **लोगों की पृष्ठभूमि पर विचार करें।** क्या उनके जीवन में ऐसी कोई बात है, जिससे आपको लगे कि वे आध्यात्मिक सत्यों को दूसरों की अपेक्षा बेहतर समझते हैं?
- **ऐसे लोगों को खोजें, जो उन आध्यात्मिक सत्यों का समर्थन करते हैं जो समय के साथ नहीं बदलते।** विज्ञान हमें दिखाता है कि सृष्टि अपरिवर्तनीय भौतिक नियमों के अधीन कार्य करती है। भौतिकी और रसायन विज्ञान के वही नियम, जो बहुत पहले कार्यरत थे, आज भी कार्यरत हैं। वे बदले नहीं हैं। इससे हमें यह अपेक्षा करनी चाहिए कि आध्यात्मिक सिद्धांत भी अपरिवर्तनीय होते हैं। परमेश्वर और आध्यात्मिक लोक के साथ लोगों के अनुभव समय के साथ संगत होने चाहिए। जो आध्यात्मिक दृष्टिकोण बदलते समय के साथ अपनी मान्यताएँ बदलते रहते हैं, उनके अपरिवर्तनीय आध्यात्मिक सत्य के साथ निकट सामंजस्य में होने की संभावना कम है।
- **ऐसे लोगों को खोजें जिनकी आध्यात्मिक सच्चाइयाँ स्वयंसिद्ध सत्य के अनुरूप हों।** वास्तविक परमेश्वर के साथ सच्चे अनुभव रखने वाले लोगों की गवाही उस ज्ञान का खंडन नहीं करनी चाहिए जो सृष्टि के माध्यम से प्राप्त होता है।

- **ऐसे स्रोतों पर निर्भर न रहें जिनके बारे में यह ज्ञात है कि उनमें झूठी शिक्षाएँ शामिल हैं।** मेरा मानना है कि सभी धर्मों में कम-से-कम कुछ मान्यताएँ ऐसी होती हैं जो मुख्यतः सत्य होती हैं। सिर्फ इसलिए कि किसी आध्यात्मिक दृष्टिकोण की कुछ बातें सत्य हैं, यह नहीं मान लेना चाहिए कि उसकी सभी शिक्षाएँ सत्य हैं। किसी आध्यात्मिक दृष्टिकोण को असत्य सिद्ध उसकी वे मान्यताएँ करती हैं जो सत्य नहीं हैं, न कि वे जो सत्य हैं। यदि कोई आध्यात्मिक दृष्टिकोण कुछ ऐसी बातों को बढ़ावा देता है जो स्पष्ट रूप से असत्य हैं, तो यह अपेक्षा न करें कि वही दृष्टिकोण आपको परम सत्य तक ले जाएगा।
- **ऐसे लोगों पर निर्भर न रहें जो झूठी भविष्यवाणियों से जुड़े हों।** यदि किसी व्यक्ति या धार्मिक समूह ने भविष्य की घटनाओं के बारे में भविष्यवाणियाँ की हैं, तो क्या जो भविष्यवाणी की गई थी वह वास्तव में घटित हुई? यह कसौटी उन भविष्यवाणियों के मामले में व्यावहारिक नहीं है जो अभी भी भविष्य से संबंधित हैं, क्योंकि जिसकी भविष्यवाणी की गई है, उसका अभी सत्यापन नहीं किया जा सकता। फिर भी, इस कसौटी का प्रभावी उपयोग करके हम अनेक ऐसे लोगों और समूहों से सुरक्षित रूप से बच सकते हैं जिनकी भविष्यवाणियाँ स्पष्ट रूप से पूरी नहीं हुई हैं।

फिर भी, ध्यान रहे कि किसी भविष्यवाणी का सही सिद्ध होना आवश्यक रूप से किसी भविष्यद्वक्ता या धार्मिक समूह की वैधता को प्रमाणित नहीं करता, क्योंकि कोई भी एक या अधिक बार केवल संयोगवश सही हो सकता है। तार्किक दृष्टि से देखें तो किसी भविष्यद्वक्ता को झूठा सिद्ध करने के लिए केवल एक गलत भविष्यवाणी ही पर्याप्त है। लेकिन यह स्थापित करने के लिए कि कोई भविष्यद्वक्ता सच्चा है, अनेक निरंतर सही भविष्यवाणियाँ आवश्यक होती हैं।

यह स्पष्ट है कि हमसे पहले अन्य लोगों ने परमेश्वर का अनुभव किया है। आइए, उनके अनुभवों से सीखने का प्रयत्न करें।

आगे मनन के लिए:

- **ऐसे कौन-से लोग हैं जिनसे आप परमेश्वर के बारे में कुछ सीख सकते हैं?**

अध्याय 30

धर्मग्रंथ के माध्यम से प्रकट परमेश्वर

पिछले अध्याय में हमने देखा कि हम उन लोगों के माध्यम से परमेश्वर के बारे में सीख सकते हैं जिन्होंने परमेश्वर का अनुभव किया है। इस अध्याय में हम इसी विचार के एक अधिक सीमित पक्ष पर विचार करेंगे: कुछ लोगों ने परमेश्वर का इतना प्रत्यक्ष अनुभव किया कि उन्होंने जो लिखा, उसे बहुत-से लोग “धर्मग्रंथ” मानते हैं।

यद्यपि कुछ धर्म मुख्यतः मौखिक रूप से—अर्थात् लिखित रूप में नहीं, बल्कि बोलकर—और स्थानीय परंपरा के माध्यम से आगे बढ़ते हैं, फिर भी व्यापक रूप से फैले धर्मों के साथ सामान्यतः ऐसा नहीं होता। धार्मिक विश्वासों को व्यापक रूप से संप्रेषित करने में लिखित पाठ प्रायः एक प्रमुख भूमिका निभाता है।

किसी लिखित पाठ को “धर्मग्रंथ” कहना, उसे अन्य लेखनों से ऊपर स्थान देना है, और प्रायः यह मानना भी है कि वह किसी न किसी प्रकार से दैवी प्रेरणा से युक्त है। अधिकांश धर्मों में ऐसे लिखित पाठ होते हैं जिन्हें उनके विश्वासों की नींव माना जाता है। लिखित पाठ धार्मिक विश्वासों को समय और स्थान की सीमाओं से परे ले जाने में सक्षम बनाते हैं।

एक स्वाभाविक प्रश्न उठता है: हम कैसे निर्धारित करें कि कोई धार्मिक लेखन सत्य है या नहीं, और उसे “धर्मग्रंथ” माना जाना चाहिए या नहीं? पिछले अध्याय में चर्चा किए गए सिद्धांतों को यहाँ आसानी से लागू किया जा सकता है:

- **अनेक स्रोतों या भिन्न-भिन्न लेखकों में संगति खोजें।** फिर से, परमेश्वर के विषय में सत्य किसी एक व्यक्ति की गवाही पर निर्भर नहीं होना चाहिए।
- **लेखकों की विश्वसनीयता पर विचार करें।** क्या उनका जीवन आपको उन पर भरोसा करने का पर्याप्त कारण देता है? क्या यह मानने का कोई कारण है कि उन्होंने अन्य लोगों की अपेक्षा परमेश्वर का अधिक गहन अनुभव किया?
- **ऐसे लेखनों को खोजें जिनमें ऐसे आध्यात्मिक सत्य हों जो समय के साथ न बदलते हों।**
- **ऐसे लेखनों को खोजें जिनमें ऐसे आध्यात्मिक सत्य हों जो स्वयंसिद्ध सत्य के अनुरूप हों।**
- **उन धार्मिक लेखनों पर निर्भर न रहें जिनके बारे में यह जाना जाता है कि उनमें मिथ्या शिक्षाएँ शामिल हैं।** फिर भी, सभी धर्मों में कम-से-कम कुछ

मान्यताएँ ऐसी होती हैं जो अधिकांशतः सत्य होती हैं। हालाँकि, यदि कोई धार्मिक लेखन वास्तव में दैवीय प्रेरणा से प्राप्त है, तो उसमें कोई भी ऐसी शिक्षा नहीं होनी चाहिए जो असत्य हो।

- **उन लेखनों पर निर्भर न रहें जो झूठी भविष्यवाणियों से जुड़े हों।** किसी धार्मिक लेखन में झूठी भविष्यवाणियों का शामिल होना इस बात का स्पष्ट संकेत है कि उसे “धर्मग्रंथ” नहीं माना जाना चाहिए, और उसका लेखक परमेश्वर से प्रेरणा प्राप्त नहीं कर रहा है।
- **पूर्ण हुई अनेक भविष्यवाणियाँ दैवीय प्रेरणा का प्रमाण हैं।** हालाँकि, कभी-कभी ऐसे दावों की वैधता को वास्तव में जानना कठिन होता है, इसलिए सावधानी बरतें।

निस्संदेह, अधिकांश धार्मिक समूह शीघ्र ही यह दावा करते हैं कि उनके “धर्मग्रंथ” ही सत्य का एकमात्र—या सर्वोत्तम—स्रोत हैं। आपको स्वयं निर्णय करना चाहिए कि आप किन धार्मिक लेखनों को, यदि किसी को, धर्मग्रंथ के रूप में स्वीकार करेंगे; और अपने आसपास के लोगों की मान्यताओं को बिना गंभीर विचार के केवल स्वीकार नहीं कर लेना चाहिए।

जहाँ तक मेरा प्रश्न है, मैंने पाया है कि बाइबल में सम्मिलित लेखन उपर्युक्त मानदंडों को इस प्रकार पूरा करते हैं जैसा कोई अन्य धार्मिक लेखन नहीं करता। मेरे लिए, बाइबल “धर्मग्रंथ” है।

निस्संदेह, चूँकि मैं बाइबल को धर्मग्रंथ मानता हूँ, इसलिए मुझे लगता है कि आपके लिए भी बाइबल को धर्मग्रंथ मानना अच्छा होगा। हालाँकि, यह निर्णय आपको स्वयं करना चाहिए, अपने ही अवलोकन और तर्क के आधार पर। यदि आप बाइबल की मुख्य शिक्षाओं का एक संक्षिप्त अवलोकन चाहते हैं, तो मैं अनुशंसा करता हूँ कि आप इसी लेखक की पुस्तक “शाश्वत जीवन की नींव” पढ़ें (इसका एक निःशुल्क ebook संस्करण ShalomKoinonia.org पर उपलब्ध हो सकता है)। या, यदि आप चाहें, तो बाइबल का एक अच्छा अनुवाद प्राप्त करके उसे स्वयं पढ़ें।

आगे मनन के लिए:

- यदि कोई हैं, तो आप किन धार्मिक ग्रंथों को “धर्मग्रंथ” मानते हैं? आप उन्हें धर्मग्रंथ क्यों मानते हैं?

क्या यीशु के माध्यम से परमेश्वर प्रकट हुआ?

हमने देखा है कि परमेश्वर संबंधों को बहुत महत्व देता है। मैं इस निष्कर्ष पर पहुँचा हूँ कि परमेश्वर हम में से प्रत्येक के साथ गहरा संबंध चाहता है। लेकिन अपनी महानता और हमारी तुलनात्मक विनम्रता के बीच इतना विशाल अंतर होते हुए परमेश्वर हमारे साथ संबंध कैसे स्थापित कर सकता है? क्या परमेश्वर किसी ऐसे व्यक्ति के माध्यम से अपने आपको हम पर अधिक स्पष्ट रूप से प्रकट कर सकता है, जिससे हम अधिक सहजता से जुड़ सकें?

यदि परमेश्वर किसी व्यक्ति के माध्यम से अपने आपको हमारे सामने अधिक प्रत्यक्ष रूप से प्रकट करे, तो ऐसा व्यक्ति कैसा होगा? क्या वह एक सर्वशक्तिमान राजा के रूप में आता? यदि नहीं, तो आपके विचार में वह कैसे आता? क्या वह स्वर्ग से उतरता, या बस चमत्कारिक रूप से प्रकट हो जाता, या वह दुनिया में अधिक साधारण ढंग से आता? क्या वह हमारे मानवीय नेताओं, धार्मिक संस्थाओं और राजनीतिक संस्थाओं का समर्थन करता? क्या वह कुछ लोगों से कठोर शब्द कहता, या सबके लिए केवल कोमल शब्द ही कहता? वह आपसे क्या कहेगा?

संभवतः आपको यह जानकर कोई आश्चर्य नहीं होगा कि नए नियम (बाइबल का नवीनतम भाग) के लेखक दावा करते हैं कि ऐसा व्यक्ति वास्तव में हमारे पास आया है; उसका नाम यीशु है। क्या यीशु सचमुच एक आध्यात्मिक लोक से हमें परमेश्वर को प्रकट करने आया था? या फिर क्या यीशु केवल मनुष्य था? इतिहास भर में बहुत-से लोगों ने अपने विशेष देवत्व का दावा किया है, परंतु अधिकांश या तो स्पष्ट रूप से भ्रमित थे या ऐसे दावे का उपयोग शक्ति प्राप्त करने के लिए कर रहे थे। ऐसा प्रतीत होता है कि इतिहास में यीशु ही एकमात्र व्यक्ति है जिसका जीवन और शिक्षाएँ वास्तव में ऐसे दावे के अनुरूप हैं। यदि ऐसा दावा सत्य है, तो स्पष्ट है कि हम में से प्रत्येक को यीशु और उसकी शिक्षाओं के बारे में जानना चाहिए। पर हम कैसे निर्धारित करें कि ऐसा दावा सत्य है?

यदि आप यीशु के विषय में सत्य की खोज करना चाहते हैं, तो निम्नलिखित बातों पर विचार करें:

- **सत्य के खोजी बनें।** केवल इस प्रतीक्षा में न रहें कि सत्य स्वयं आपके पास आ जाएगा। उसकी खोज स्वयं करें। जब आपको सत्य मिले, तो उसे अपनाइए।
- **सत्य की खोज में समय लगाइए।** उन लोगों से बात कीजिए जो इस समय

यीशु का अनुसरण करते हैं (और यदि आप चाहें, तो उन लोगों से भी जो उन्हें अस्वीकार करते हैं)। बाइबल के “New Testament” भाग में यीशु के प्रारम्भिक अनुयायियों ने उनके बारे में जो लिखा, उसे पढ़िए।

- **परमेश्वर से सहायता माँगिए।** एक पिछले अध्याय में यह निष्कर्ष निकाला गया था कि परमेश्वर हमारे साथ संबंध चाहता है; इसलिए उनसे प्रार्थना कीजिए कि वे यीशु के बारे में सत्य जानने में आपकी सहायता करें।

मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि यीशु के संबंध में केवल पाँच सामान्य निष्कर्ष ही संभव हैं:

1. यीशु वास्तव में अस्तित्व में थे ही नहीं। उनके बारे में सभी ऐतिहासिक लेखनों का तथ्य में कोई आधार नहीं है।
2. यीशु एक वास्तविक व्यक्ति थे, संभवतः एक अच्छे व्यक्ति, परन्तु केवल एक मनुष्य थे। उनके अनुयायियों द्वारा उनके बारे में जो कुछ लिखा गया, उसका बहुत-सा भाग सत्य नहीं है।
3. यीशु एक वास्तविक व्यक्ति थे, जिन्होंने जानबूझकर लोगों को यह विश्वास दिलाने के लिए धोखा दिया कि वे वास्तव में जितने थे, उससे बढ़कर कुछ थे। उनके बारे में लिखने वाले लोग भी धोखा खा गए।
4. यीशु और उनके अनुयायी सभी भ्रमित, पागल लोग थे।
5. यीशु वास्तव में हमें परमेश्वर को प्रकट करने के लिए एक आध्यात्मिक लोक से आए थे।

मेरे विचार में, मैंने यह निष्कर्ष निकाला है कि केवल अंतिम विकल्प ही ऐतिहासिक प्रमाणों और सृष्टि में मुझे दिखाई देने वाले स्वयंसिद्ध सत्य के अनुरूप है। मैं इस निष्कर्ष पर पहुँचा हूँ कि यीशु वास्तव में हमें परमेश्वर को प्रकट करने के लिए एक आध्यात्मिक लोक से आए थे।

आगे मनन के लिए:

- यीशु कौन हैं, इस विषय में आपकी मान्यताएँ क्या हैं? यीशु के बारे में आपकी मान्यताएँ किस आधार पर टिकी हैं?
- बाइबल में मत्ती, मरकुस, लूका या यूहन्ना की पुस्तकों में यीशु के जीवन के बारे में पढ़िए।

निष्कर्ष

स्वयंसिद्ध सत्य की खोज की इस यात्रा में मेरे साथ जुड़ने के लिए धन्यवाद। हमने यह प्रश्न पूछकर आरंभ किया था: सत्य क्या है? यद्यपि हम उस प्रश्न के किसी अंतिम उत्तर तक नहीं पहुँचे हैं, फिर भी मैं आशा करता हूँ कि आप मेरे साथ इस बात से सहमत होंगे कि सत्य का अस्तित्व है, और सत्य महत्त्वपूर्ण है। आशा है कि अब आपको इस विषय की पहले से कुछ बेहतर समझ हो गई होगी, जितनी इस पुस्तक को आरंभ करते समय थी।

यदि आप इस पुस्तक में प्रस्तुत मेरे कुछ निष्कर्षों से सहमत रहे हैं, तो संभव है कि आप यह जानने में रुचि रखें कि बाइबल आध्यात्मिक सत्य के बारे में क्या कहती है। यदि ऐसा है, तो मैं आपको “शाश्वत जीवन की नींव” नामक एक सहायक पुस्तक पढ़ने के लिए आमंत्रित करता हूँ। उस पुस्तक में मैंने धर्मग्रंथ के मुख्य बिंदुओं का संक्षिप्त, सरल और सुबोध सार प्रस्तुत करने का प्रयास किया है, और यह दिखाने के लिए धर्मग्रंथ के अनेक संदर्भ दिए हैं कि ये सत्य कहाँ से आते हैं। मैंने उन मान्यताओं का प्रचार करने से बचने का प्रयास किया है जो बाइबल में स्पष्ट रूप से नहीं पाई जातीं। इसका एक निःशुल्क ई-पुस्तक संस्करण (कई भिन्न फ़ाइल प्रारूपों में) निम्नलिखित में से किसी एक वेबसाइट पर उपलब्ध हो सकता है:

ShalomKoinonia.org

FoundationsForEternalLife.com

जहाँ भी पुस्तकें बेची जाती हैं, वहाँ इसकी मुद्रित प्रति भी उपलब्ध हो सकती है (यदि सामान्य रूप से भंडारित न हो, तो विशेष आदेश पर)।

जब आप परमेश्वर को जानने और उनके मार्ग पर चलने का प्रयास करें, तब परमेश्वर आप पर आशीष करें।
